धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचं इन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

Regd. No. 58414/94

स्वामी रामानन्द जी द्वारा संचालित

हमारी साधना

त्रैमासिक

वर्ष 30 • अंक 3 • जुलाई-सितम्बर 2023

मूल्य रु. 25/-

श्रीगुर पद नख मनि गन जोती। सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती॥

करुणामयी सुमित्रा माँ

हमारी साधना

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।।
न त्वहं कामये राज्यम्, न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां, प्राणिनामार्ति नाशनम्।।

वर्ष : 30 जुलाई-सितम्बर 2023 अंक : 3

भजन

माला राम नाम की फेर।
परम मधुर अति सरल सांतिप्रद मेटति दुख मन केर।
सकल सोक संताप दूरि करि सुख की करति बखेर॥
हिय हारे की अटल टेक बनि बांह गहति तजि देर।
मनोकामना सफल करन में करति न नेकु अबेर॥
ठग ठाकुर नर नारि न निरखति गुनति न रंक कुबेर।
भेद भाव तजि सब कहँ तारति दहि अपार अघ ढेर॥
कलि में सुलभ न साधन दूजो जो करि सकहि निबेर।
रामसरन अस समुझि प्रेम सों राम राम तू टेर॥

भजन संख्या 7 **- स्व. श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल जी 'रामसरन'**

प्रकाशक
साधना परिवार
स्वामी रामानन्द साधना धाम,
संन्यास रोड, कनखल,
हरिद्वार-249408
फोनः 01334-311821
मोबाइलः 08273494285

सम्पादिका
श्रीमती रमना सेखड़ी
995, शिवाजी स्ट्रीट,
आर्य समाज रोड
करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
मोबाइलः 09711499298

उप-सम्पादक
श्री रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'
1018, महागुन मैंशन-1,
इन्दिरापुरम,
गाजियाबाद-201014
ई-मेलः rcgupta1018@gmail.com
मोबाइलः 09818385001

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	रचयिता	पृ.सं.
1.	चित्र – करुणामयी सुमित्रा माँ		2
2.	भजन	स्व. श्री सूर्यप्रसाद शुक्ल जी 'रामसरन'	3
3.	सम्पादकीय		5-6
4.	गीता विमर्श – श्रीमद्भगवद्गीता पंचमोऽध्याय (गतांक से आगे)	स्वामी रामानन्द जी	7-11
5.	गुरु वाणी		12
6.	Letters to Seekers — Letter No. 11 and 12		13-16
7.	भागवत के मोती		17
8.	पूज्य साहू जी का जीवन चरित्र – चतुर्थ भाग	अनिल चन्द्र मित्तल	18-20
9.	योगक्षेमं वहाम्यहम्	रमेश चन्द्र गुप्त	21-23
10.	स्वामीजी के वचन		23
11.	परम दृष्ट्वा निवर्तते	रमना सेखड़ी	24-27
12.	शुभ समाचार		27
13.	जीवन में सुखी कैसे रहें? (कल्याण नवम्बर 2014, भाग 88, संख्या 11 से उद्धृत)	श्री रमेश चन्द्र जी बादल	28-31
14.	दृष्टिकोण का परिवर्तन (अखण्ड ज्योति, जुलाई 2020 से उद्धृत)		31
15.	बाल शिविर 2023 का विवरण	श्री अविनाश ग्रोवर	32
16.	साधना परिवार की कार्यकारिणी बैठक का विवरण		33-34
17.	सद्गृहस्थ कौन है?		34
18.	गुरु पूर्णिमा शिविर 2023 का विवरण तथा प्रवचन सार		35-39
19.	16.5.2023 से 18.8.2023 तक के 2100/- से ऊपर दानदाताओं की सूची		40-41
20.	वार्षिक शिविर-2023 कानपुर (3 से 6 अक्तूबर 2023) – सूचना		42
21.	वार्षिक शिविर-2023 बीसलपुर (3 से 6 नवम्बर 2023) – सूचना		42
22.	श्री स्वामी रामानन्द जी साधना साहित्य		43
23.	चित्र – गुरु पूर्णिमा शिविर में साधकों को योगाभ्यास कराती हुई श्रीमती रेवा भाम्बरी जी		44
24.	चित्र – बच्चों के शिविर के कुछ विहंगम दृश्य		44

Printed and Published by Shri Dinesh Bahl for and on behalf of Swami Ramanand Sadhna Pariwar, Sadhna Dham, Sanyasa Road, KANKHAL-Haridwar (Uttarakhand) and printed at Rakmo Press Pvt. Ltd., C-59, Okhla Industrial Area Phase-I, New Delhi-110020.

सम्पादकीय

सभी साधक भाई-बहनों को सम्पादक-मण्डल का प्रेम भरा राम-राम, अभिनन्दन!

''हर वर्ष स्वतन्त्रता दिवस बड़े उत्साह और उल्लास के साथ मनाया जाता है। लेकिन क्या हम कभी इस स्वतन्त्रता के वास्तविक महत्त्व और अर्थ पर विचार करते हैं? हमने अपने लोगों और समग्र राष्ट्र की सामूहिक भलाई के लिये इस स्वतन्त्रता का कितना रचनात्मक उपयोग किया है?

हम शारीरिक रूप से वह सब कुछ करने के लिए स्वतन्त्र हो गये जो हमें करना अच्छा लगता था। लेकिन आत्मा की स्वतन्त्रता के बिना शारीरिक स्वतन्त्रता अधूरी है। इसका परिणाम केवल अनुशासनहीनता और नैतिकता रहित जीवन होता है। भारत के शरीर को स्वतन्त्रता मिल गई, अब भारत की आत्मा को स्वतन्त्र करने का समय आ गया है। आत्मा को मुक्त करने के लिये हमें सत्यमय, आत्ममय, प्रेममय, प्रेम से परिपूर्ण होना होगा।''

ये शब्द हैं एक आध्यात्मिक विचारक मीना ओम् जी के जो प्रणाम आन्दोलन की संस्थापिका हैं। कितना सही कहा है इस विचारक ने? वास्तव में हमारा देश अंग्रेजी शासन से तो मुक्त हो गया किन्तु हम लोग अपनी ही आदतों के गुलाम हो गये। हमें हर समय दूसरों के दोष, दूसरों के कर्तव्य दिखने लगे, अपने कर्तव्यों का ध्यान ही नहीं करते।

हमारा कर्तव्य है कि हम अपने आचरण को गुरु महाराज के निर्देशों के अनुसार ढालें। भगवान् कृष्ण ने गीता के श्लोक 18.58 में अर्जुन को कहा है कि यदि तू मेरे वचनों के अनुसार नहीं चलेगा तो नष्ट हो जायेगा – **'न श्रोष्यसि विनङ्क्ष्यसि'**। यही सोच कर हमें भी गुरुदेव की हर आज्ञा का पालन करना चाहिए।

पूज्य गुरुदेव ने हमें साधना का सूत्र दिया है – सेवा, प्रेम व समर्पण। साथ ही कहा है – अभीप्सा इसका प्रवेश द्वार है। अध्यक्ष महोदय ने भी अपने प्रबोधन में कहा है –

''त्याग, प्रेम एवं मधुर व्यवहार ही सेवा का मूल मन्त्र है। पूज्य गुरुदेव महाराज ने हमें प्रेम व सेवा का ही पाठ पढ़ाया है।''

हमारे वरिष्ठ साधक श्री सुधीर कान्त जी ने भी अपने प्रवचन में इसी विचार की पुष्टि करते हुए कहा है –

''व्यवहार में प्रेम, त्याग और सेवा की भावना बनाये रखना भी अपने आप में एक साधना है।''

यह तिमाही हम साधकों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस अवधि में बालकों का शिविर भी होता है और गुरु पूर्णिमा का भी। इन दोनों का विवरण पाठकों को पत्रिका के इस अंक में मिलेगा। साथ ही अन्य लेखों व स्थायी स्तम्भों के अतिरिक्त रमना बहन का प्रज्ञा चक्षु खोलने वाला लेख **'परम दृष्ट्वा निवर्तते'** भी पढ़ने को मिलेगा।

साधना धाम में होने वाले आगामी कार्यक्रमों की सूचना, दानदाताओं की सूची, साधकों से सम्बन्धित शुभ व अशुभ समाचार तो पत्रिका में होते ही हैं। इन सबके अतिरिक्त पाठकों के सुझाव सदैव ही आमन्त्रित हैं जो e-mail या WhatsApp द्वारा सम्पादक अथवा उप-सम्पादक को प्रेषित किये जा सकते हैं।

सुधी पाठकों से पत्रिका की समीक्षा की अपेक्षा है।

पाठकों से नम्र निवेदन है कि पत्रिका के सम्पादन में जो त्रुटियाँ रह गई हों उनको क्षमा करते हुए सुधार के लिये सुझाव व अपनी मौलिक कृतियाँ (लेख, कवितायें व भजन) प्रेषित करते रहें।

पत्रिका के लिये भजन, लेख आदि रचनाएँ मौलिक (स्वरचित) हों तो उत्तम है। यदि कहीं से लिये गये हैं तो संकलनकर्ता लिखकर अपना नाम लिखें। लेख आदि पूज्य गुरुदेव की साधना पद्धति से मेल खाते हुए होने चाहिए।

आगामी अंकों के लिये साधकगण कृपया अपने भजन, कवितायें व लेख इत्यादि, डाक द्वारा पत्रिका की सम्पादिका अथवा उप-सम्पादक के पते पर; WhatsApp के माध्यम से उनके मोबाइल 09711499298 या 09818385001 पर; अथवा उनके ई-मेल sadhnadham@sadhnaparivar.in या rcgupta1018@gmail.com पर प्रेषित करें।

गीता विमर्श

श्रीमद्भगवद्गीता पंचमोऽध्याय

(गतांक से आगे)

ऐसे सन्त का और परिचय देते हैं –

न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम्।
स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः ॥20॥

'ब्रह्मवेत्ता – ब्रह्म में स्थित हुआ ऐसा व्यक्ति प्रिय को प्राप्त कर प्रहर्षित नहीं होता और अप्रिय को प्राप्त कर उद्विग्न नहीं होता। उसकी बुद्धि स्थिर होती है और उसे कभी मोह नहीं होता'।।20।।

ब्रह्मवित्-ब्रह्म को जानने वाला। जिसे बौद्धिक-बोध है श्रवण तथा मनन से। जिसमें प्रभुचरणों की प्रीति जगी है, विश्वास और श्रद्धा भी है, वह ब्रह्मवित् है। गीता की भाषा में हम उसे ज्ञानी या ज्ञानवान् कहेंगे (देखिए अध्याय 7, श्लोक 16 और आगे)। वह अभी साधक है। अनेक जन्मों के उपरान्त वह प्रभु को पाता है (7-19)।

'ब्रह्मणि स्थितः' तो भगवान् में स्थित – निवास करने वाला व्यक्ति है वह जिसने उसे पा लिया है। उसके लिए वियोग समाप्त हो गया है। जो सिद्ध सन्त है, जो जीवन्मुक्त है, जिसकी चर्चा ऊपर हुई है वह 'ब्रह्मणि' स्थित है। ब्रह्मवित् कहने का विशेष प्रयोजन? क्या ब्रह्मस्थित बिना ब्रह्मवित् हुए सम्भव है? 'ब्रह्मस्थिति' को अधिक स्पष्ट करने के लिए ही प्रयोग हुआ प्रतीत होता है।

ऐसे व्यक्ति की बुद्धि स्थिर होती है। वह स्थितप्रज्ञ होता ही है। बौद्धिक चंचलता समाप्त हो चुकी होती है। तभी तथ्य का ठीक-ठीक भान होता है। बाह्य उतार चढ़ावों से, प्रकृतिगत स्पर्शों से वह दोलायमान नहीं होता। प्रभु को प्राप्त हुए व्यक्ति में यह मति की स्थिरता सहज ही प्रकट होती है, भले ही उसने विशेष कर उसे प्राप्त करने के लिए साधना न की हो।

वह व्यक्ति असंमूढ़ होता है। भ्रान्ति से नितान्त रहित होता है। मोह का, अज्ञान का उसे स्पर्श भी नहीं हो सकता। भगवान् में निवास और अज्ञान साथ-साथ रह ही नहीं सकते, जैसे सूर्य में अन्धकार का वास नहीं हो सकता। *जनकादि को जो मोह कहा जाता है, वह क्योंकर? वह किसी कारण से भी हुआ हो। परन्तु यह निश्चित है कि जब व्यक्ति को प्रभु में निवास प्राप्त हो गया हो तो फिर मोह नहीं होता।

यह ब्रह्मणि स्थिति एक दम से पूरी नहीं होती। भागवती-चेतना क्रमशः स्थायीभाव में उतरने लगती है। पहिली अवस्थाओं में संस्कार अभी शेष रहते हैं और उनके क्षय के लिये भागवती-चैतन्य का कुछ समय के लिए हटना ही आवश्यक और हितकर होता है विकास की दृष्टि से। क्रमशः विकारों और संस्कारों का क्षय होने लगता है और उस चेतना का निर्बाध साम्राज्य स्थापित हो जाता है। फिर व्यक्ति 'असंमोह' की स्थिति प्राप्त कर लेता है अर्थात् वह कभी मोह में नहीं पड़ता।

ऐसे सन्त की क्या दशा होती है? वह प्रिय को पाकर खिल नहीं उठता। प्रिय अनुभूति उसमें ज्वार-भाटे की तरह उभाड़ नहीं लाती। वह छोटी सी लहर की तरह समा जाती है उसकी समता में। इसका उसके आन्तरिक सन्तुलन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अप्रिय अनुभूति से वह घबराता नहीं, चिन्तित अथवा क्षुब्ध नहीं होता। कोई हड़बड़ाहट नहीं होती। वह बिना चेष्टा के ही अपना सहज स्वामी बना रहता है। लौकिक दृष्टि से जो महत्त्व का है वह उसकी दृष्टि में वैसा नहीं रहता।

*जनकादि को मोह न था, वह तो प्रभुचरणों की परा प्रीति थी, वह भगवान् की विशेषता थी, वह उनकी कमी न थी।

वह तो काल के अनन्त पटल पर उस कारीगर को अपनी तस्वीरें खेंचता हुआ, रंग लगाता हुआ, मिटाता और बनाता हुआ देखा करता है। वह साक्षी बन जाता है उस यज्ञेश्वर की महती लीला का।

इसका अर्थ है कि सन्त के भीतर सन्तुलन बना रहता है। न दिमाग में ही हल-चल होती है न दिल में ही तूफान आते हैं और न आँखों पर मोह का पर्दा पड़ता है। वह भीतर बाहर सम, सन्तुलित, स्वामी बना रहता है। आगामी श्लोक और अधिक परिचय देता है ऐसे सन्त का।

बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत्सुखम्।
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते॥21॥

'बाहर के स्पर्शों में लगाव न रखने वाला व्यक्ति आत्मा में जिस सुख को लाभ करता है, ब्रह्मयोग द्वारा युक्त हुई आत्मा वाला वह (सन्त) अक्षय सुख को भोगता है'॥21॥

ऐसे भगवत्प्राप्त व्यक्ति के सुख की चर्चा है इस श्लोक में। उसका सुख कैसा है? एक उदाहरण देकर बताने की चेष्टा की है। वह सुख अक्षय है – जिसका क्षय न हो सके, जो कभी समाप्त ही न हो, वह अक्षय होता है।

उस स्थिति को लाभ कर लेने वाले व्यक्ति को जो आनन्द प्राप्त होता है, वह आनन्द कभी कम नहीं होता। रात-दिन एकरस रहता है। आँखें मूँदने और खोलने में कोई अन्तर नहीं रहता। दिन, महीने और बीतते हुए वर्ष कोई फ़र्क नहीं डालते। वह आनन्द से भरा रहता है, परन्तु वह आनन्द मतवाला नहीं करता। जो मतवाला करता है, उसमें अभी तमस् तथा राजस् का प्रभाव है। वह एक सा रहने वाला ही नहीं होता। वह तो शराब की सी मादकता होती है जो उतर जाती है। यह जो प्रभु प्राप्ति से होने वाला आनन्द है, यह सूक्ष्म होता है, सम और स्थायी होता है। वह समत्व की चेतना का साक्षी ही होता है। इसे आनन्द न कहकर सुख ही कहा है। यह क्षणिक अनुभव नहीं होता। वह तो चेतना की स्थिति ही होता है। अतः क्षीण होने का प्रश्न ही नहीं।

अनजान साधक खो जाने के लिए, मतवालेपन के लिए बिलबिलाया करते हैं। वह तो जाने वाला ही होता है और उसे जाना ही चाहिए विकास के लिए।

उस सन्त के लिए कहा 'ब्रह्मयोगयुक्तात्मा' अर्थात् जिसकी आत्मा युक्त हो गई है भगवान् से, योग के द्वारा, कर्म के संन्यास के योग के द्वारा। कर्मों को प्रभु अर्पण करने की साधना ने जिन्हें भगवान् से जोड़ दिया है, वे लोग।

वह प्रभु साधना ही से तो पाया जाता है, अनन्यता से ही तो उससे मिलन होता है, इसे मिलने के बाद फिर वियोग सम्भव ही नहीं होता।

कौन सा सुख? जो आत्मा में ही लाभ किया जाता है, जो सुख बाह्य स्पर्शों पर निर्भर नहीं करता। अतः जिसे लाभ करने के लिये बाह्य स्पर्शों से आसक्ति को छोड़ना होता है। जब तक बाहर के भोगों में लगाव है, चेतना भीतर सिमट नहीं पायेगी, वह आत्मा में स्थिर ही नहीं होगी। समाधि लाभ न होगी। अतः आत्म-स्थिति का, समाधि का, जो आनन्द है वह न मिलेगा।

वह आनन्द जो लोग समाधि लगाकर, निर्विकल्पावस्था को लाभ करके लेते हैं, वह इस प्रकार के सन्त के लिए सुलभ होता है। उसे तो आँखें भी नहीं मूँदनी होतीं, न प्राण चढ़ाने होते हैं। वह अक्षय सुख का भण्डार हमेशा उसे प्राप्त होता है। बाहर के स्पर्शों से चेतना को खींचने से ही समाधि की अनुभूति सम्भव है। समाधि है, चेतना का किसी स्तर में अथवा केन्द्र में अवरुद्ध हो जाना पूर्णरूपेण। उसके लिए और स्तरों और केन्द्रों से उसे हटाना आवश्यक हो जाता है।

अब स्पर्शगत सुखों के विषयों में कहते हैं –

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः॥22॥

'जो संस्पर्श से प्राप्त होने वाले भोग हैं, वे दुःख के उत्पत्ति स्थान ही हैं। उनका आदि

और अन्त है, हे अर्जुन! बुद्धिमान् उनमें रमण नहीं करता'।। 22।।

ऊपर कहा था कि बाह्य स्पर्शों में अनासक्त होकर ही आत्मस्थिति होती है। अब उस विषय के तथ्य को प्रकट कर रहे हैं।

प्रकृति के स्पर्श से सुख तथा दु:ख होते हैं। अनुकूलता में सुख और प्रतिकूलता में दु:ख होता है। इन्द्रियाँ प्रकृति के विषयों के सम्पर्क में आती हैं। यदि वह स्पर्श अनुकूल होता है तो सुख की प्रतीति होती है, अन्यथा दु:ख की। जब हम इन्द्रियों को सुख के लिए बरतते हैं और घने सुख को चाहते हैं तो प्रकृति का स्पर्श भी घना होना चाहिये। उसे संस्पर्श कहा जाता है। भोग के लिए संस्पर्श आवश्यक है।

सुख स्पर्श में नहीं, अनुकूलता तथा प्रतिकूलता में है। हम स्पर्श कैसे ग्रहण करते हैं, उसमें है। वही स्पर्श कभी प्यारा लगने लगता है कभी काटने लगता है। यह न भूलना होगा।

ऐसे भोग दु:ख के उत्पत्ति स्थान हैं। ऐसे सुखोपभोग का परिणाम दु:ख होता है। हम प्रकृति से सुख पाने के लिए इन्द्रियों को साधन बनाते हैं। यह उनका दुरुपयोग होता है। इसके लिए शारीरिक दु:ख के रूप में मूल्य देना पड़ता है। जिह्वा को रसास्वादन के लिए बरतते हैं, रस मिलता है और आमाशयगत विकार सहना पड़ता है। रसास्वादन के लिए इन्द्रियों का उपयोग प्रकृतिगत नियमों को चुनौती देता है और व्यक्ति प्रलोभन में फँस जाता है। प्रकृति से जो सुख मिलता है, वह क्षणिक होता है। अत: लालसा को जागृत कर देता है। तृप्ति की जगह अतृप्ति होती है। जितना भोगें उतनी ही लालसा की ज्वाला बढ़ती है। व्यथित होता है व्यक्ति और तृप्ति के लिए पच-पच मरता है। भोगते-भोगते ही सुख अदृश्य हो जाता है। ठण्डक तो पल भर भी नहीं रहती। जलन, अभाव की जलन, रह जाती है रुलाने के लिए। परिणामस्वरूप वासनायें प्रबल होती हैं, पशुत्व प्रधान होता है। दु:ख की परम्परा लम्बी होती चली जाती है। इस प्रकार से भोग दु:ख के कारण हो जाते हैं।

भोग आदि-अन्त वाले हैं। भोग आता है और देखते-देखते विलीन हो जाता है। उसकी जीवनलीला ही इन दो सिरों 'आना और जाना' में समाप्त हो जाती है। क्षणिकत्व ही उसका परिचय है। अस्थिरता ही उसका धर्म है। स्थिर होने पर भोग, भोग ही नहीं रहता। सुख का सुखपना समाप्त हो जाता है। वह सामान्य हो जाता है – बासी हो जाता है।

ऐसा होने पर भी भौतिक सुखों के पीछे क्यों लोग इस प्रकार भागते हैं। उनकी दृष्टि क्षणिक है। वे अनुभव की परम्परा को नहीं देख पाते। वे देखते हैं आने वाले सुख को और उसके पीछे भागते हैं मदहोश हुए। वह मिलता है और समाप्त होता है देखते-देखते। और भोग आता है, उसके पीछे भी ठीक पहिले की तरह भागते हैं। जैसे एक कीड़े की दृष्टि छोटी सी लम्बाई तथा चौड़ाई तक ही सीमित है, ऐसे ही सामान्य व्यक्ति की दृष्टि वर्तमान भोग तक ही सीमित रहती है। दौड़ के आनन्द को ही वह जानता है। हलचल की गर्मी का सुख ही उसके अनुभव में आता है, अत: उसी में रमा रहता है। जब इस प्रकार के बहुत अनुभव होते हैं, जब दीवार से टक्कर लगती है, निराशा होती है, तब विचार जागता है। तब ज़रा दूर आगे तथा पीछे देखने लगता है। भीतर भी नज़र जाती है। तब समझ आती है कि यह तो अन्धी दौड़ थी, कोल्हू के बैल की सी, जिस दौड़ को दौड़ने में वह लगा हुआ था। तब वह बुद्धिमान हो जाता है। यह विकास-क्रम की आगामी सीढ़ी है – भोगवाद के आगे की।

बुद्धिमान् व्यक्ति भोगों के क्षणिकत्व को जानता है। इनके सुखपन के रहस्य को जानता है। इनके द्वारा होने वाले बन्धन को जानता है। चेतना के विकास में जो ये सीमा-बन्धन करते हैं उसे समझता है। वह जानता है यह भोग की लालसा, प्राण तथा मन की लालसा है। इनका अतिक्रमण करना आवश्यक है अपने पद

में प्रतिष्ठित होने के लिए, भागवती-चैतन्य को जागृत करने के लिए। अत: वह भोग में आनन्द नहीं मानता, उसमें रम नहीं जाता।

कैसे पकड़ा जाता है मनुष्य? खाने से नहीं। खाने में आनन्द लेने से, उसके रस में डूब जाने से। जितना व्यक्ति रस में डूबता है, उतना ही वह रस उसे पकड़ लेता है।

हाँ, जिसने उस रसराज के रस को पा लिया है, वह रस लेता हुआ भी पकड़ा नहीं जा सकता। वह तो 'रसिक वैरागी' होता है, वह अलिप्त होता है। यह सन्त की स्थिति है।

शक्नोतीहैव यः सोढुं प्राक्शरीरविमोक्षणात्।
कामक्रोधोद्भवं वेगं स युक्तः स सुखी नरः॥23॥

'जो शरीर छूटने से पहिले यहाँ काम और क्रोध के वेग को सह सकता है वह मुक्त है, वह मनुष्य सुखी है'॥23॥

बाह्य सुखों में आसक्ति न हो, ठीक है, परन्तु जो आन्तरिक उद्वेग है, जो मनोगत विकार हैं उनसे भी तो मुक्त होना होगा। तभी समत्व होगा, तभी चैन हो सकती है।

काम तथा क्रोध प्रबल आन्तरिक विकार हैं, ये अन्तर्मंथन करते हैं। व्यक्ति को विक्षिप्त कर देते हैं। उसका सन्तुलन बिगड़ जाता है, वह अन्धा हो जाता है, कुकर्म में प्रवृत्त होता है। तीसरे अध्याय के अन्त में भगवान् ने काम तथा क्रोध को ही तो मनुष्य का शत्रु कहा था।

सामान्य व्यक्ति तो इनके वेग को सह नहीं सकता, वह झुक जाता है। इनके अधीन होकर रहता है, अत: पापाचरण करता है। धीरे-धीरे बाहर से ठोकर लगती है, विचारशीलता जगती है, विवेक होता है, पश्चात्ताप होता है। फिर भी समय पर विवेक लुप्त हो जाता है। बह जाता है व्यक्ति काम क्रोध के वेग से। दूसरी अवस्था आती है – इनका वेग होता है, समझ भी रहती है कि यह ग़लत है, परन्तु मानो बलात्कार से कोई बहा ले जाता है। जानता बूझता व्यक्ति पाप करता है। यह दु:खदायी स्थिति होती है, व्यक्ति को नितान्त परवशता प्रतीत होती है। परन्तु, विकास की दृष्टि से देखते हुए, यह स्थिति तो विकार के वेग की क्षय होने की अवस्था है। भीतर चेतना की क्रमश: जागृति होती आ रही है, वह जागृति अभी और बढ़ेगी। वह चेतना प्राण को भी प्रभावित करेगी। तब काम तथा क्रोध का वेग क्षीण हो जायेगा। भीतर का बल बढ़ेगा और संस्कार प्रकट होकर क्षीण होंगे क्योंकि अन्तरात्मा तो विवेकाश्रित हुआ है; वह इन वेगों के निराकरण के लिए तैयार हो ही चुका है। जब तक अन्तरात्मा अनुमति देता है तब तक ही कोई प्रवृत्ति बनी रह सकती है। जब अन्तरात्मा निराकरण करने लगता है – दृढ़ता से, विवेक से, विश्वास से, तो प्रवृत्ति दुर्बल होने लगती है। यह काम-क्रोध के विषय में भी सत्य है।

अत:, विकासक्रम में इसके उपरान्त की अवस्था होती है, काम-क्रोध के वेगों पर अधिकार की। वे जगते हैं, परन्तु उनके साथ ही उनसे अधिक बली विवेक जगता है और अन्तरात्मा का, इनका निराकरण करने वाला संकल्प जगता है। व्यक्ति विजयी होता है। तब दैवीप्रकृति का पक्ष प्रबल होता है। असुरों की पराजय होती है।

यह स्थिति है जिसका यहाँ वर्णन किया है। जो व्यक्ति काम-क्रोध के वेग को सह सकता है, वह मुक्त है, वह सुखी है। युक्त – साधना के रास्ते पर पड़ा हुआ। जुड़ गया है जो मार्ग में, जैसे बैल जुए में जुड़ जाता है। उसके जीवन में साधना ने उचित स्थान पा लिया है। उसका जीवन अपने लक्ष्य के लिये जीया जाने लगा है।

सुख का अनुभव इस अवस्था को लाभ करने पर ही होता है। जब व्यक्ति पहली बार शान्ति को अनुभव करता है, काम-क्रोध को परास्त देखता है, भीतर की निश्चलता का अनुभव करता है, एक अद्भुत सुख होता है। एक चञ्चलता का सुख है। दुनियाँ हाय-हाय में

भी तो मस्त रहती है। कभी हाय-हाय का सामान न हो तो भी चैन नहीं पड़ती। व्यक्ति वैसा सामान बना लेता है। एक सुख होता है हाय-हाय से हटने का – उसे सौभाग्य वाला ही पाता है। उस सुख की यहाँ चर्चा है। व्यक्ति जितना विकारों से रहित होता है, उतनी ही वास्तविक शान्ति की प्रतीति करता है।

(इससे परे वह अवस्था है, जिसमें काम-क्रोध का वेग ही समाप्त हो जाता है। वह 'पर' के दर्शन से होता है, वह संस्कारों के नितान्त क्षय से सम्भव है, वही जो कर्म का नितान्त संन्यास है उससे।)

यदि व्यक्ति जीते जी वेग को सहने लायक हो गया है, इसी संसार में रहते-रहते हो गया है, तो उसने सचमुच मार्ग को पा लिया है और सुख का स्वाद चखा है।

फिर सिद्ध योगी की स्थिति का वर्णन करते हैं –

योऽन्तःसुखोऽन्तरारामस्तथान्तर्ज्योतिरेव यः।
स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति॥24॥

'जिसे भीतर से सुख लाभ होता है, जो भीतर ही रमण करता है और भीतर से ही जिसे प्रकाश प्राप्त होता है, वह योगी ब्रह्मभाव को प्राप्त करके भीतर ब्रह्मनिर्वाण को पाता है'॥24॥

ऊपर कहे सुख की पराकाष्ठा में क्या हो जाता है? वह सुख जो काम-क्रोध के वेग को सहने में मिलता है, वह तो भीतर का ही है। वह अन्तःसुख है जो बाहर के सुख की लालसा छोड़ देता है। आन्तरिक सुख की प्रतीति जिसके लिए सहज हो जाती है, वह **'अन्तःसुख'** है। जब चेतना भीतर आत्मभाव में स्थिर हो जाती है – वह घर बना लेती है, तभी यह सम्भव होता है। तब व्यक्ति छका रहता है भीतर के सुख से। उदासीन रहता है बाह्य स्पर्शों के विषय में।

'अन्तरारामः' भीतर ही जो भली प्रकार से रमण करता है। लोग इन्द्रियों के द्वारा विषयों में रमण करते हैं। वह भीतर ही अपने में, आत्मभाव में आनन्द लेता है, उसी में गोते लगाता है। जिसे आनन्द के लिये बाहर आना ही नहीं होता। जिसने अपने भीतर आनन्द के अक्षय स्रोत को पाया है वह है **'अन्तरारामः'**।

और **'अन्तर्ज्योतिः'** – जिसे भीतर से ही ज्योति मिलती है। जिसके भीतर ज्ञान का भण्डार खुल गया है। जिसको जानने के लिए मन, बुद्धि अथवा इन्द्रियों पर आश्रित नहीं रहना पड़ता। जिसको मार्गदर्शन के लिए अपने अतिरिक्त किसी के भी आश्रित नहीं होना होता। जिसकी अन्तरात्मा जगकर रास्ता आलोकित करने लगी है, ऐसा व्यक्ति 'अन्तर्ज्योतिः' कहा जा सकता है।

'अन्तःसुखः' और **'अन्तरारामः'** में क्या अन्तर है? सुख शान्ति है, चैन है, स्थिरता है, आराम है, आनन्दित होना, तृप्त होना, छके रहना है। ज्योतिः ज्ञान की सूचक है।

ऐसा व्यक्ति क्रमशः ब्रह्मभूत हो जाता है। ब्रह्मभाव को प्राप्त किये हुये 'ब्रह्मभूत' होते हैं। ब्राह्मी-चेतना जग जाती है, उसे ब्रह्मभाव प्राप्त होता है। मानुषी-चेतना की सीमाओं को लांघकर ब्राह्मी-चेतना में प्रतिष्ठित होता है। फिर क्या होता है? ऐसा व्यक्ति ब्रह्मनिर्वाण को पाता है। ब्रह्मलीन हो जाता है। समा जाता है आत्मभाव में।

दूसरे अध्याय के अन्त में स्थितप्रज्ञ की स्थिति के परिपाक रूप में भी तो ब्रह्मनिर्वाण की प्राप्ति कही है। बह्म-भूत होना ब्राह्मीस्थिति को लाभ करना है। ब्रह्मनिर्वाण आत्मा में लीन होना है, आत्मनिष्ठ हो जाना है। क्या यह ब्रह्मनिर्वाण और भगवान् में प्रवेश बिल्कुल एक ही बात है, वह जिसकी चर्चा हमें 18वें अध्याय के अन्त में (55 श्लोक में) मिलती है? उसके लिए तो पराभक्ति अनिवार्य कही है। यह तो निर्गुणोपासकों की ब्रह्मलीनता प्रतीत होती है। यह आत्मा में लीन होना है, भगवान् में प्रवेश तो इसके अनन्तर हो सकता है। आगामी श्लोक की 12वें अध्याय के चतुर्थ श्लोक से तुलना करिएगा।

(क्रमशः)

गुरु वाणी

दृश्य जगत में भी वास्तव में माता ही क्रिया करती है। आपको भुलाने के लिये नहीं, आपकी संस्कार शृंखलाओं को क्षीण करने के लिये। (पत्र 57)

❖ ❖ ❖

अपने मन को, तन को, अपनी बुद्धि को, अपने आपको उस पर छोड़ियेगा। (पत्र 58)

❖ ❖ ❖

जो अन्य प्रयत्नों का, अपनी साधना की पवित्रता के बल का भी परित्याग कर देता है, आश्रय मानता है तो भगवान् का, विश्वास रखता है तो भगवान् का। उसकी परेशानियाँ खत्म हो जाती हैं। ज्यों ही उसको पूरा भरोसा प्राप्त हुआ, शान्ति का साम्राज्य छा जाता है। प्रत्येक अवस्था में उसी का हाथ दीखने लगता है। (पत्र 58)

❖ ❖ ❖

अपने को सुखी तथा दुःखी बनाने में आप नहीं जानती कि हमारा अपना कितना हाथ रहता है। उन्हीं शब्दों को यदि हम सुने अनसुने कर देते हैं तो हमें दुःख नहीं होता और यदि हम महत्त्व देते हैं तो खेद होता है, व्याकुलता होती है - जीना भी दूभर हो जाता है। (पत्र 59)

❖ ❖ ❖

दूसरों से हम यह आशा करें कि वह अपने तरीकों को बदल दें, तो यह प्रायः असम्भव है। और यदि हमारा सुख दूसरों के तरीकों पर आश्रित हो गया तो हम सुखी शायद ही हो पायें। परन्तु यदि हम अपनी आदत को ऐसा कर लें कि दूसरों की बातों से हम दुःखी न हों तो कोई भी हमें दुःखी न कर पायेगा। इस तरह से तो हम हर अवस्था में सुखी रह सकते हैं। (पत्र 59)

❖ ❖ ❖

याद करने में ध्यान देना और स्मरण शक्ति में विश्वास रखना कि समय पर बात याद आनी चाहिए और याद आयेगी, यह आवश्यक है। (पत्र 59)

Letters to Seekers

Letter No. 11 : Shri Ram : Kunalta.

29.08.1944

My dear .....,

I have already sent a p.c. in reply to yours of the 20th.

India in bonds cannot think either of communism or state ownership; there is only to be rank exploitation. The first and foremost problem to me is freedom. It will rejuvenate us in every way – morally, economically, socially, spiritually etc. It is slavery which has eaten into our vitals.

You are feeling scruple about business. You are a partner, though a sleeping one. For the present you have to continue as you are, doing best and most honestly the share of work that is yours. If and when any change is required, the call shall come from within. The solution of this problem will come in due course. The law of growth is: stand where you are, discharge your duty as best as you can and rest satisfied. The march is from imperfection to perfection gradually in the personal sphere. When gradually the vision becomes broader, one begins to understand the march of events in the external and internal world and unrest leaves one once for all. Justice of the Cosmic play lies revealed before one's eye.

Sex is not to be suppressed. It is to be sublimated into the aspiration for the divine. Perfect freedom from sex comes when one has reached the farther reaches of spiritual growth. No impatience, but a definite conviction that it will be sublimated in due course! Look ahead towards the path and not towards your obstacles. The more you can turn your gaze to the positive side, the more peaceful and speedy will become your march.

I am much pleased to read your appreciation of Mahatma Gandhi. I am ever ready to study his writings and works. Of late I have been in the interior, and not been able to see the papers.

It is important to keep one's mind open. One begins to apprehend truth directly when the intellect is stilled. Convictions for which we have attachment, abandonment of which will mean pain to us, are a block in the way of our progress. At present with the facts that are at my disposal and the power of understanding that is mine, I think this to be true; what is true in reality I cannot say. Such an attitude is a desideratum.

Aurobindo's convictions are his convictions. No body is required to take as final any one

else's convictions, except in so far as they are immediately concerned with the path. Even that is not required when one begins to see the path for himself.

Mahatma Gandhi is great, let me take into my daily life whatever good I can take. Aurobindo is great, let me have what I can have of him. Aspire neither to be Aurobindo or Mahatma Gandhi in entirety. You are to be yourself. You will be able to resolve the differences (understand and really evaluate them), when you have fairly advanced. Their reasoning and arguing will do nothing till then. Then arguing will come to a standstill. Peace will reign in the intellect as well.

What about your Sadhana? How much time do you devote? How is it going on? The greater the time that you do meditation, japa and smarana, the better. You will begin to receive the solution of your problems from within as you proceed ahead. Mere intellectual activity is simply disturbing and does not end in any permanent gain. Please keep me in touch.

Remember me to every one in the family. Enough for the present. May the Lord bless you and His higher light dawn on you.

Yours in the Lord,

Ramanand

❖ ❖ ❖

Letter No. 12 : Shri Ram : Digoli.

11.09.1944

My dear .....,

Yours of the 5th to hand. I hope you have received the reply to your last letter.

Now about your Sadhna – I am pleased to learn that you are getting on with Japam regularly. Only put in a little more zeal, a little more time and energy. I know of no better and easier a path. It has been bearing fruit in myself and many others. There is no reason why it should not help you. Knowing that we are on the right road, it is due that we should plod on patiently and energetically. Is it not so? The showers of His grace will come down as soon as we are ready for them physically and mentally. I wonder whether your health will allow you to sit in meditation for more time. The name should take you towards physical wholeness as well as mental. What is more important is the attempt to keep up the name during the day as far as possible.

You have read the "Prayers and Meditation of the Mother". How do you like them? Real love and call will have a quick response. Do you ever look into the points that you got from me – "For Aspirants?" I hope you have the pamphlet with you.

The Navaratri is fast approaching. We propose to have the Navanha Path of Tulsi Ramayana. There will be daily evening Satsang, talks on the Gita, and Sankirtana – Tulsi Ramayana is a grand thing! If the symbolical meaning is understood, it becomes simply magnificent. We may hold two or three Akhand japs as well. You may as well have some special programme.

Now about Sri Aurobindo and his views. At the very outset I may tell you that I am ready to pay my deepest respect to persons to whom I owe all that is in me, but to deify them or to take them to be infallible etc. is beyond me. I worship the God that is within me and within all. I view persons as instruments in His hands. I worship the truth, and I believe that it is the best and ultimate when it comes from within. Mere authority is only a temporary thing, even if it be universal or eternal.

'Descent of the Cosmic Kundalini' is an every moment experience with me, and spasmodic one with many others whom I know. My spiritual experiences fall in line with Sri Aurobindo's. It is therefore that I recommend his works. (Also because his philosophy is akin to my line of thought).

I am not aware of what he has written about Mahatma Gandhi, and what his disciples have made of it. I have simply heard of it. To imply that the Mahatma belongs to the breed of Asuras seems strange from Aurobindo's pen. Viewed impartially, I should not wonder, if he may recommend all out help for allies merely because they are fighting Germany the Asuric force. 'Mother Russia' by Maurice Hindus, 1913 publication has really opened my eyes. What havoc Germany intended to work in Russia! The English have done very bad things indeed; but to think of a world under German domination is to remember the reign of Ravana with the modern weapons of destruction in his hands.

Let it not be understood that I like the English in power. Far from it, freedom for all the slave nations seems to me the only way to a lasting world peace. For India, there is no other solution which will heal her sores.

Descent is a gradual process. Perfect descent means perfection.

I have forgotten so many times to convey to you that the Biochemic medicines are covering the characteristic malaria fever as successfully as any other. Many cases go by simply nature cure methods, without the use of medicines.

Remember me to one and all in the family. How is your satsang going on?

Yours in the Lord,

Ramanand

❖ ❖ ❖

Letter No. 13 : Shri Ram : Digoli.

11.09.1944

My dear .....,

When I had written the above I got yours of the 3rd which had been somehow detained. The Akhand jap is a good news.

For a spiritualist, I mean, an aspirant, it is necessary to be above board. For the wilful breach of rules, we should be willingly ready to suffer. If you can win over the officials by assurance for future, it is alright. To go a step further and to try to cause corruption is a crime against self and society both.

Have a large heart. Have faith in Him. What will come will be for the good of one and all ultimately. The loving Father puts us in straits to teach lessons which we otherwise refuse to learn.

As pain is due to attachment – some desire, some keeping back from the Lord. When all – all that one is and is one's – is laid at his feet, one is ready for any condition that Lord puts one in. The best use should be made of circumstances as you have had recently.

The clouds have cleared, I hope, before you get this letter. It should mean a serious warning for the future.

The body and all connected with it are passing things. Their impermanence is to be firmly grasped, but they are neither to be hated nor shunned, but the best use is to be made of them for experience here. That is for what they are.

Fear not suffering, it is the stimulus of evolution.

With sincere regards,

Yours in the Lord,

Ramanand

❖ ❖ ❖

भागवत के मोती

भागवत परमहंसों की संहिता है। श्री गुरु महाराज ने भागवत जी को बहुत मान्यता प्रदान की है और दिगोली तपस्थली में 6 महीने तक भागवत कथा पर प्रवचन किया था। इसी बात को ध्यान में रखकर हमने गत अंक से भागवत के चुने हुए सन्देश पत्रिका में 'भागवत के मोती' नाम के स्थायी स्तम्भ में छापने आरम्भ किये हैं। प्रस्तुत है इस स्तम्भ की दूसरी कड़ी –

7. जिज्ञासु को चाहिए कि गुरु को ही अपना परम प्रियतम आत्मा और इष्टदेव माने। उनकी निष्कपट भाव से सेवा करे और उनके पास रहकर भागवत धर्म की अर्थात भगवान को प्राप्त कराने वाले भक्तिभाव के साधनों की क्रियात्मक शिक्षा ग्रहण करे। इन्हीं साधनों से भगवान प्रसन्न होते हैं।

(भागवत 11.3.22)

8. पहले शरीर, सन्तान आदि में मन की अनासक्ति सीखे। फिर भगवान के भक्तों से प्रेम करना सीखे। इसके पश्चात प्राणियों के प्रति यथायोग्य दया, मैत्री और विनय की निष्कपट भाव से शिक्षा ग्रहण करे।

(भागवत 11.3.23)

9. भगवान की प्राप्ति का मार्ग बतलाने वाले शास्त्रों में श्रद्धा और दूसरे किसी भी शास्त्र की निन्दा न करना, प्राणायाम के द्वारा मन का, मौन के द्वारा वाणी का और वासनाहीनता के अभ्यास से कर्मों का संयम करना, सत्य बोलना, इन्द्रियों को अपने-अपने गोलकों में स्थिर रखना और मन को कहीं बाहर न जाने देना सीखे।

(भागवत 11.3.27)

10. यज्ञ, दान, तप अथवा जप, सदाचार का पालन और स्त्री, पुत्र, घर, अपना जीवन, प्राण तथा जो कुछ अपने को प्रिय लगता हो – सब-का-सब भगवान के चरणों में निवेदन करना, उन्हें सौंप देना सीखे।

(भागवत 11.3.28)

पूज्य साहू जी का जीवन चरित्र

चतुर्थ एवं अन्तिम भाग

साधना परिवार के सभी भाई-बहनों को मेरी राम-राम!

पूज्य साहू जी के जीवन चरित्र के इस भाग में सन् 1952 में गुरुदेव के निर्वाण के बाद का कुछ विवरण देने का प्रयास करेंगे। गुरुदेव के जाने के बाद पिताजी पूज्य साहू जी को इस बात का बहुत मलाल था कि मैं गुरुदेव के प्रवचनों को टेप नहीं कर सका। उस समय टेप रिकॉर्डर बहुत ही दुर्लभ होते थे। वह भी बहुत-बहुत बड़े आकार के बिजली से चलने वाले (सन् 1952 तक बीसलपुर में बिजली भी नहीं थी), जिन्हें लगाना भी बहुत मुश्किल होता था।

पूज्य साहू जी गुरुदेव की कुछ बातें बताते थे –

1. गुरुदेव कहते थे काशीनाथ मैं जो बोल रहा हूँ इसको रिकॉर्ड कर ले या किसी शॉर्टहैण्ड वाले से लिखवा ले। यह सब जो ऊपर से उतर रहा है दोबारा उपलब्ध ना हो सकेगा। पर अफसोस न टेप रिकॉर्डर मिल सका और ना शॉर्टहैण्ड लिखने वाला।
2. गुरुदेव कहते थे काशीनाथ मैं 50 वर्ष पहले आ गया। अभी मेरी बातों, मेरे दर्शन को समझने की सोच लोगों में विकसित नहीं हो सकी है।
3. गुरुदेव अपने विचार और क्रान्तिकारी जीवन दर्शन को पश्चिम यानी विदेशों में भी प्रचारित करना चाहते थे जहाँ इसकी समझ विकसित हो चुकी है। ऐसा गुरुदेव करते, लेकिन यह सम्भव ना हो सका।
4. पूज्य साहू जी कहते थे कि उनके प्रवचन बहुत ही विलक्षण, सारगर्भित एवं गम्भीर होते थे।

प्रवचन में शब्दों और वाक्यों की जैसे एक माला पिरो दी हो। उसमें से एक वाक्य निकाल देने पर पूरा प्रवचन अधूरा लगने लगता और वाक्य में से एक शब्द निकाल देने पर वाक्य अधूरा लगने लगता। ऐसा लगता जैसे ऊपर से उतरे शब्दों के मोतियों को वाक्यों के माध्यम से चुन-चुन कर प्रवचन रूपी माला तैयार होती हो।

शायद उन्होंने ठीक ही कहा था यदि वह 50 वर्ष बाद आते तो शायद उनकी प्रवचनों द्वारा दी गई शिक्षा की अमूल्य धरोहर को हम संरक्षित करने में सफल हो सकते। अब जैसी प्रभु एवं गुरु इच्छा।

अब पूज्य साहू जी का मुख्य ध्यान गुरुदेव की तपस्थली दिगोली पर था। वे चाहते थे कि दिगोली पूरी तरह संरक्षित हो सके। अभी तक दिगोली में 2 कमरे पत्थर और मिट्टी से बने थे और उस पर स्लेट पत्थर से लकड़ी की बल्ली डालकर पटाव किया गया था। एक कमरा गुरुदेव का ध्यान कक्ष और दूसरा साधकों को ठहरने के लिये था। पूज्य साहू जी ने पूज्य बाबू राम जी, जय देव जी एवं अन्य साधकों के सहयोग से ध्यान कक्ष में लेंटर डलवाया जो उस समय बहुत ही दुरूह एवं असम्भव सा कार्य था। साथ वाले साधक निवास वाले कमरे का पुनर्निर्माण करके ऊँचाई में एक लकड़ी की छत दुछत्ती की तरह बनाई गई। पटाव भी पूर्व की भाँति बल्ली एवं स्लेट से निर्मित किया गया था। शिविर होने पर पुरुष साधक दुछत्ती (जो लकड़ी की बनी थी) पर लेटते और महिला साधिकायें नीचे। ध्यान मुख्य लेंटर वाले कमरे में (जो आज भी ध्यान कक्ष है) में होता था। रसोईघर स्नानघर आदि अस्थाई बनाये जाते थे। जब मैंने सन् 1964 में दिगोली शिविर में माँ जी से दीक्षा ली थी, तब भी ऐसी ही

व्यवस्था थी।

पत्रिका का सम्पादन सन् 1954 से सन् 1956 तक बहन श्याम कुमारी वर्मा जी के निधन तक, उनके पास ही रहा। उसके बाद पुनः बीसलपुर आ गया, जहाँ पूज्य साहू जी एवं पूज्य सत्यदेव वैद्य जी करते रहे। प्रकाशन एवं छपाई साधना कार्यालय बीसलपुर से चलती रही।

अब गुरुदेव के जाने के बाद शिविर करने के लिये स्थान की व्यवस्था में परेशानी आने लगी और यह सोचा जाने लगा कि एक अपना स्थान, आश्रम हो ताकि सब साधक निर्बाध रूप से शिविरों का आयोजन कर सकें और सत्संग, ध्यान का लाभ उठा सकें। इसमें माँ सुमित्रा जी द्वारा बड़े प्रयासों से धन का संचय किया जाने लगा एवं पूज्य साहू जी के अथक प्रयासों से स्थान आदि का चयन गंगा किनारे साधना धाम वाली जमीन का हो सका। उसकी रजिस्ट्री आदि के लिये पूज्य साहू जी बीसलपुर से वकील आदि को लेकर आये और इस कार्य को सम्पन्न कराया। इसमें पूज्य साहू जी ने काफी धन भी लगाया। अब साधना धाम के सब साधकों को दान के लिये प्रेरित किया जाने लगा।

हर स्तर पर दान जैसे कमरा निर्माण, अन्य स्थानों का निर्माण, पंखा, बेंच, अलमारी के रूप में किया जाने लगा। साधना धाम आश्रम के निर्माण की देखरेख के लिये श्री साईं दास जी ऋषि (जो एक उच्च कोटि के साधक भी थे) ने अपनी सेवाओं को गुरुदेव के चरणों में अर्पित किया।

धाम का निर्माण सन् 1960 के लगभग शुरू होकर लगभग सन् 1962-63 तक चला। कुछ कमरों के निर्माण के बाद माँ जी एवं पूज्य साहू जी कई-कई दिन रहकर हॉल का बचा हुआ निर्माण कार्य एवं ऊपर की मंजिल के निर्माण की देखरेख करते थे। साधना हॉल की नींव में गेरू से राम-राम लिखित कागजों को रखा जाता था जिसको हम सब साधक एवं बच्चे लिख कर भेजते थे। आश्रम को बनवाने में पूज्य साहू जी, पूज्य सुमित्रा जी, सूद साहब, टण्डन जी, सत्यदेव जी, पुरुषोत्तम जी, विग साहब, जेटली साहब, एवं अनेकों-अनेक साधकों ने, जिनके नाम याद नहीं आ रहे हैं, इस यज्ञ में योगदान किया।

साधना पत्रिका बीसलपुर से निरन्तर निकल रही थी और पुस्तकों का प्रकाशन भी हो रहा था। कुछ छोटी पुस्तकें पूज्य साहू जी के प्रयासों से बीसलपुर की अग्रवाल प्रेस से दी गईं। पत्रिका का सम्पादन सन् 1963 में पूज्य रूपनारायण टण्डन जी (मेरठ) ने सम्भाला, जो सन् 1976 तक करते रहे। सन् 1970 के दशक में साधना धाम पूरी तरह विकसित हो चुका था। अतः साधना कार्यालय का कार्य साधना धाम स्थानान्तरित कर दिया गया। सभी पुस्तकों का स्टॉक भी साधना धाम भेज दिया गया। लगभग 2 वर्ष पत्रिका की छपाई एवं वितरण आदि का कार्य साधना धाम द्वारा ही किया जाता रहा। उसके बाद सन् 1980 के लगभग से साधना पत्रिका की छपाई, सम्पादन एवं पुस्तकों की छपाई आदि का कार्य अब तक दिल्ली से ही हो रहा है।

पूज्य साहू जी ने बीसलपुर में कई शिविरों का आयोजन भी किया। पहला शिविर सन् 1966 के लगभग बाग में किया गया। बाग के बीच में बनी गेस्ट हाउस कोठी के हॉल में ध्यान का स्थान रखा गया एवं चारों ओर 5-6 बड़े-बड़े टेंट लगाकर खाने एवं ठहरने की व्यवस्था की गई। इस शिविर में गुरु जी के समय के सब पुराने साधक आये थे। शिविर बहुत भव्य एवं प्रभावशाली था। मैं उस समय नौवीं या दसवीं कक्षा में पढ़ता था। चारों ओर हरियाली एवं प्राकृतिक वातावरण होने के कारण सब साधक बहुत ही आनन्दित थे। कुछ लोगों के नाम जो शिविर में आये थे मुझे आज तक याद हैं जिनमें मुख्य हैं लूंबा जी (न्यायाधीश, पंजाब उच्च न्यायालय), टण्डन जी, वर्मा जी, वैद्य जी, जगदेव जी, पारीक जी, पाठक

जी, जोशी जी आदि।

दूसरा शिविर सम्भवतः सन् 1969 में अग्रवाल सभा भवन में आयोजित हुआ, जिसमें स्थानीय साधक मात्र 4-6 रहे होंगे। बाकी सब बाहर से थे। सामने के हॉल को ध्यान कक्ष बनाया गया था, बाकी कमरे ठहरने के लिये। स्थानीय साधकों ने भी पूरे समय परिसर में रहकर शिविर में सहभागिता की। शिविर में 35 से 40 के लगभग साधक थे, जिनमें कुछेक पूज्य पाठक जी, पारीख जी, जगदेव जी, बाबूराम वर्मा जी आदि का होना मुझे याद है।

तीसरा शिविर सम्भवतः सन् 1971 में अग्रवाल सभा भवन में ही आयोजित हुआ, जिसमें बाईं तरफ के बड़े कमरे को ध्यान कक्ष बनाया गया था। इसमें भी सभी साधक बाहर से ही आये थे, जिनमें पूज्य मुनि नाथ जी भी शामिल थे।

पिताजी के साथ मुझे दक्षिण भारत, बद्रीनाथ, केदारनाथ, वैष्णो देवी, जगन्नाथ पुरी आदि बहुत से स्थानों पर जाने का मौका मिला। मैंने देखा उन्हें जहाँ ठहरा दो, जैसा खाने को कह दो, यात्रा के लिये जिस साधन का भी प्रयोग करो, उन्हें कभी फर्क पड़ता ही नहीं था। पैसे तो वे अपने पास रखते ही नहीं थे। साथ में जो भी हम लोगों में से होता उसे गड्डी पकड़ा कर कहते खर्चा करते रहना। कई बार तो भुगतान लेने वाले को गड्डी पकड़ा देते और कहते गिन कर अपने पैसे ले लो। उनमें जीवन भर धन का कभी भी मोह नहीं देखा।

सन् 1985 में मैं जब नौकरी से त्यागपत्र देकर अपने व्यापार कोल्ड स्टोरेज आदि की व्यवस्था देखने हेतु बीसलपुर वापस आया तब तक पूज्य साहू जी की देखरेख में थी। उससे साधना नाम का कोई सम्बन्ध ना था। दिगोली की मरम्मत एवं अन्य सब खर्चे पूज्य साहू जी द्वारा ही वहन किये जाते थे। वहाँ के निर्माण में पूज्य बाबूराम जी ने लगभग 6 माह वहाँ रहकर निर्माण-कर्मचारियों के साथ रहकर स्वयं मेहनत करके मरम्मत आदि का कार्य कराया।

वहाँ की व्यवस्था चक्रधर जोशी जी (दिगोली निवासी) जो गुरुदेव को दिगोली लाने वालों में से एक थे, की देखरेख में सन् 2000 तक चली। सन् 1987 में पिता जी (साहू जी) ने मुझे दिगोली की देखरेख की जिम्मेदारी सौंपी क्योंकि उन्हें परेशानी होने लगी थी।

सन् 1990 में मैंने दिगोली में पीछे (पश्चिम) साइड की कुछ जगह साधना धाम के नाम से खरीदी और उसके कागजात साधना धाम को सौंप दिये। उसी दौरान ध्यान कक्ष के बगल वाला कमरा जो ध्वस्त हो चुका था, पुनः निर्माण करके उसके ऊपर एक और कमरे का निर्माण कराया एवं रसोईघर व स्नानघर आदि बनाये। सन् 1990 के करीब दिगोली धाम की व्यवस्था एवं देखरेख हम लोगों ने साधना धाम को सौंप दी।

दिगोली को आज के भव्य स्वरूप को प्रदान करने में आदरणीय स्वर्गीय श्री सेखड़ी जी, विष्णु गोयल जी, मेरे भाई स्वर्गीय प्रदीप जी एवं धाम की कार्यकारिणी समिति को श्रेय जाता है।

अन्तिम समय तक पूज्य साहू जी साधना धाम में प्रति वर्ष लम्बा प्रवास करते थे एवं साधना करते थे। 12 नवम्बर 1991 को गाजियाबाद में मेरी बड़ी बहन जी के घर पर, मैं भी उस समय उनके साथ था, सुबह का ध्यान करते-करते लम्बी सांस लेकर इस नश्वर शरीर को छोड़, गुरुदेव के साथ दिव्य धाम को प्रस्थान कर गये, किन्तु आज भी उनकी दिव्य ज्योति की खुशबू से बीसलपुर एवं समस्त साधना परिवार, साधना धाम, दिगोली धाम महक रहा है।

साधना परिवार के प्रति पूज्य साहू जी के महान् योगदान को शत-शत नमन!

– अनिल चन्द्र मित्तल

योगक्षेमं वहाम्यहम्

भगवान् ने गीता के 9वें अध्याय के 22वें श्लोक में कहा है –

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥

अर्थात् जो अनन्य प्रेमी भक्तजन मुझ परमेश्वर को निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्काम भाव से भजते हैं, उन नित्य निरन्तर मेरा चिन्तन करने वाले पुरुषों का योगक्षेम मैं स्वयं कर देता हूँ।

भगवान् भक्त को आश्वासन देते हैं कि जो भक्त निरन्तर मेरा चिन्तन करते हैं, मुझे भजते हैं, मैं भी उनके सभी कार्य सिद्ध कर देता हूँ। योगक्षेम शब्द का अर्थ बड़ा विस्तृत है। अध्यात्म के क्षेत्र में इसका अर्थ है कि मैं भगवत् प्राप्ति के लिये किये हुए साधन की रक्षा करते हुए भगवान् से योग करा देता हूँ। सांसारिक क्षेत्र में इसका अर्थ हो सकता है कि चारों पदार्थों – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति करा देता हूँ। प्रथम दृष्टि से देखने में लगता है कि ईश्वर की प्राप्ति तो बहुत आसान है परन्तु शब्दों की गहराई में जाते हैं तो वास्तविकता का पता लगता है। योगक्षेम का आश्वासन किन भक्तों को दिया गया है, इसका विश्लेषण करना आवश्यक है।

प्रथम शर्त है – **अनन्याः जनाः** – जिसका अन्य कोई न हो। अन्य कौन हो सकता है? धर्मावलम्बी भक्तगण मन्दिर जाते हैं, सभी देवी-देवताओं की पूजा करते हैं, उनकी प्रतिमाओं में उन्हीं देवताओं के स्वरूप का दर्शन करते हैं, सबके सामने अपनी माँगें रखते हैं। किसी से धन की प्राप्ति की कामना, किसी से पुत्र प्राप्ति की कामना, किसी से नौकरी, किसी से स्त्री, किसी से शारीरिक कष्ट निवारण आदि आदि कामनाओं की पूर्ति चाहते है।

जो भगवान् को तत्त्व से नहीं जानते वे यह भूल जाते हैं कि सभी देवताओं को शक्ति तो परब्रह्म परमेश्वर ही देते हैं, तो जो कहना है वह 'सीधे भगवान् से ही क्यों न कहें? मन्दिर में ही नहीं, भक्तगण तो अनेको तीर्थों में भी जाते हैं, व्रत उपवास भी करते हैं। साथ ही साथ इच्छाओं की पूर्ति न होने पर भगवान् को कोसते भी हैं।

यह तो हुई देवताओं का आश्रय लेने वालों की बात। ऐसे भी लोग हैं जिनको अपने बल का आश्रय है, किसी को बुद्धि का आश्रय है, किसी को पुत्र या पुत्रों का आश्रय है, और कोई-कोई तो धन को भगवान् माने हुए हैं और पूरा जीवन धन कमाने में लगा देते हैं। जो इन सब का आश्रय छोड़कर भगवान् से ही प्रेम करते हैं उन्हीं को **अनन्याः जनाः** कहा गया है।

सभी आश्रयों का उदाहरण गोस्वामी तुलसीदास ने मानस के सुन्दर काण्ड की इन चौपाइयों में दिया है –

जननी जनक बंधु सुत दारा।
तनु धनु भवन सुहृद परिवारा॥
सब कै ममता ताग बटोरी।
मम पद मनहि बाँध बरि डोरी॥
अस सज्जन मम उर बस कैसें।
लोभी हृदयँ बसइ धनु जैसें॥

यह तो हुई परिभाषा अनन्यता की। आगे कहते हैं **नित्याभियुक्तानां** – नित्य-निरन्तर मेरा चिन्तन करने वाला हो। क्या दुनिया के सब काम छोड़कर केवल भगवान् का चिन्तन करते रहें? नहीं, भगवान् ने कहा है –

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युद्ध च।

कर्तव्य कर्म भी कर और मेरा स्मरण भी कर। परन्तु यह कैसे सम्भव है – एक साथ दो काम कैसे हो सकते हैं?

यह दो प्रकार से सम्भव है –

एक

मच्चिता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च॥
(गीता 10.9)

मुझ में मन लगा हो, मुझ में ही प्राण बसे हों, मेरी भक्ति की ही सर्वत्र चर्चा करे और मेरा कथन करते हुए ही सन्तुष्ट हो और मुझ में ही रमण करता रहे। प्रश्न होता है कि यदि यही सब करता रहे तो अन्य कार्य कैसे करे? इसका उत्तर पुनः सुन्दर काण्ड में खोजना होगा। सीता माता की खोज में निकले श्री हनुमान जी महाराज की यात्रा को देखें। सबसे पहले कहते हैं –

बार बार रघुबीर सँभारी।
तरकेउ पवनतनय बल भारी॥

फिर कहते हैं

राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ विश्राम।

पुनः सुरसा के प्रति कहते हैं –

राम काजु करि फिरि मैं आवौं।
सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौं॥

लंकिनी भी हनुमान जी से कहती है –

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा।
हृदयँ राखि कोसलपुर राजा॥

विभीषण को अपना परिचय देते हुए कहते हैं –

तब हनुमंत कही सब राम कथा निज नाम।

तथा

सुनहु विभीषन प्रभु कै रीती।
करहिं सदा सेवक पर प्रीती॥

एवं

एहि विधि कहत राम गुन ग्रामा।
पावा अनिर्वाच्य विश्रामा॥

इतना ही नहीं, सीता जी को अपना परिचय देने से पहले क्या कहा –

रामचंद्र गुन बरनैं लागा।
सुनतहिं सीता कर दुख भागा॥

स्वयं को पर्वताकार करके दिखाया किन्तु उसमें भी श्रेय भगवान् को दिया –

सुनु माता साखामृग नहिं बल बुद्धि बिसाल।
प्रभु प्रताप तें गरुड़हि खाइ परम लघु ब्याल॥

हनुमान जी महाराज ने रावण को जो अपना परिचय दिया है उसमें तो प्रभु का ही गुणगान है – **'सुनु रावन ब्रह्मांड निकाया'** से लेकर छः चौपाइयों और एक दोहे में केवल राम जी की महिमा गाई है। ऐसा व्यवहार होता है निरन्तर चिन्तन करने वालों का। छोटे बच्चे की जो माँ होती है वह घर के सारे काम-काज करते हुए भी चिन्तन बच्चे का ही करती रहती है। ज़रा सी रोने की आवाज़ उसे आकर्षित कर लेती है।

यह है गीता के इस श्लोक का व्यावहारिक रूप।

सतत स्मरण करने का दूसरा तरीका है स्वयं को सेवक समझ कर सांसारिक कर्तव्यों का पालन करना। सन्त तुलसी दास ने मानस में लिखा है –

सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत॥

संसार में जो कुछ भी दिख रहा है चाहे चर हो या अचर, सब कुछ मेरे स्वामी का रूप है – ऐसा जानकर जो सबकी सेवा करे वह अनन्य भक्त है। अर्थात् जो भी कार्य करो, उसे भगवान् का कार्य समझ कर करो।

अगली शर्त है – **पर्युपासते** – निष्काम भाव से भजते हैं। भगवान् को सकाम भाव से भी भजते हैं और निष्काम भाव से भी। गीता के 7वें अध्याय के 16 व 17वें श्लोक में बताया गया है कि भक्त चार प्रकार के होते हैं – आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी। इनमें से केवल ज्ञानी भक्त ही निष्काम भाव से भजते हैं और वही भगवान् को अत्यन्त प्रिय हैं।

यह तो हुई योगक्षेम की गारंटी। इसके अतिरिक्त जो भगवान् के अनन्य भक्त हैं और 10वें अध्याय के 9वें श्लोक में बताई गई शर्तों पर खरे उतरते हैं उनको तो भगवान् वह तत्त्वज्ञानरूप योग भी स्वयं

ही प्रदान कर देते हैं जिससे वे भगवान् को प्राप्त करने योग्य हो जाते हैं –

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते॥

(गीता 10.10)

इतना ही नहीं, ऐसे भक्तों पर अनुग्रह करने के लिये उनके अन्त:करण में स्थित होकर अज्ञानरूपी अन्धकार को हटाकर ज्ञानरूपी दीपक को प्रज्ज्वलित भी कर देते हैं। (गीता 10.11)। हृदय के अन्दर अन्धकार तभी तक रहता है जब तक भगवान् रूपी प्रकाश नहीं बसता। इसी की पुष्टि रामचरितमानस में की गई है –

ममता तरुण तमी अंधियारी।
राग द्वेष उलूक सुखकारी॥
तब लगि बसत जीव मन माहीं।
जब लगि प्रभु प्रताप रबि नाहीं॥

हमारे मन पर जन्मों-जन्मों का मैल चढ़ा रहता है, प्रभु भक्ति का प्रवेश होते ही वह मैल धुल जाता है और हृदय में रह जाता है ज्ञान का प्रकाश। भक्त को तो भगवान् सभी कुछ देने को तत्पर रहते हैं – ज्ञान, सम्पत्ति, बल, ऐश्वर्य, राज्य, सद्बुद्धि अथवा जो भी उसके हित में हो, और मुक्ति तो है ही। सम्पत्ति कितनी देते हैं, देखिये –

जो संपति सिव रावनहि दीन्ह दिएँ दस माथ।
सोइ सम्पदा विभीषनहि सकुचि दीन्हि रघुनाथ॥

जो सम्पत्ति लंका के रूप में शंकर भगवान् ने रावण को कई हजार वर्षों की तपस्या के फलस्वरूप दी थी वही सम्पत्ति भगवान् ने एक क्षण में अपने भक्त को दे डाली।

ऐसा है भक्ति का प्रभाव!

– रमेश चन्द्र गुप्त 'विनीत'

स्वामीजी के वचन

थोड़ा सा स्वाध्याय, चाहे 15-20 मिनट ही हो सोने से पूर्व कर लेना बहुत हितकर होता है। उसका प्रभाव सुप्त चेतना पर पड़ता है। फिर नाम का चिन्तन करते हुए सो जाना चाहिए। प्रभु नाम के प्रभाव से कामनाएँ शान्त होती हैं। पूरी होने वाली पूरी होकर निपट जाती हैं। साधक को भीतर उभरने वाली कामनाओं को प्रभु के आगे रखकर कह देना होता है – दिल से, 'चाहे तो इसे पूरा कर दो और चाहे तो इसे मिटा दो। यह आपके अर्पण है'। यह मनोवृत्ति बनाये रखनी चाहिए। समय पाकर कामनाओं के जगत से ही व्यक्ति परे हो जाता है।

– पत्र पीयूष पत्र संख्या 320

परम दृष्ट्वा निवर्तते*

भगवत प्राप्ति की दो विधायें प्रमुख रूप से प्रचलित हैं। दोनों पद्धतियों का उद्देश्य आत्मशक्ति के विकास को अग्रसर करना है। एक पद्धति जो अधिकांशत: प्रचलित है वह है आरोह पथ। आत्मशक्ति – विकास का दूसरा और आरोह पथ से ठीक प्रतिकूल पथ है – अवरोह।

आरोह पथ में शक्ति के ऊर्ध्व-गमन पर ही बल दिया जाता है। शक्ति का मूलाधार अथवा किसी अन्य केन्द्र से जागृत करके सहस्रार में ले जाकर वहाँ लीन करने का प्रयत्न व्यक्तिगत संकल्प अथवा किन्हीं साधनों द्वारा किया जाता है। आरोहपथ में हठयोग, साँख्य योग, संन्यास योग, आत्म संयम योग, राजयोग, अक्षर ब्रह्म योग सम्मिलित हैं। व्यक्तिगत प्रयत्न का प्राधान्य ही इसका मूल मन्त्र है। आत्म संयम की एक अच्छी स्थिति, इस पथ में प्रवेश पाने से पूर्व अति आवश्यक है कि शक्ति जाग्रति से पहले आत्म संयम का विशिष्ट उत्कर्ष हो चुका हो। आत्म संयम द्वारा प्राणमय तथा मनोमय कोषों और चक्रों का विशोधन होता है। जगी हुई शक्ति से काम क्रोधादि निम्न प्रवृतियाँ इतनी प्रबल और वेगवती हो उठती हैं कि उन पर काबू पाना मुश्किल हो जाता है और अध: पतन Disintegration of Personality का भय बना रहता है।

इसके अलावा समुचित आहार-विहार, प्राणायाम आदि के द्वारा शरीर को शुद्ध तथा आरोग्य करना वांछनीय है। अनुचित तथा समय से पूर्व ही शक्ति उत्थान के द्वारा मृत्यु तक भी जाना सम्भव है। दिमाग का बिगड़ जाना, अहंकार और क्रोध का वेग इस मार्ग के सहज लक्षण हैं। पुनश्च: प्रबल रूप से वैराग्य होना आवश्यक है। स्मरण रहे कि वैराग्य की प्रबल भावना भी व्यक्ति में विषमता ले आती है। जीवन के सभी मूल्यों का निराकरण ही हो जाता है – न संगठन होता है, न सूत्रीकरण।

आरोह मार्ग की उपरोक्त व्याख्या परम पूज्य गुरुदेव स्वामी श्री रामानन्द जी महाराज ने आध्यात्मिक साधन भाग-एक में की है।

आरोह पथ का साधक इन्द्रियों को इन्द्रियों के विषयों से समेट लेता है, ताकि उसकी बुद्धि स्थिर हो सके। जिस प्रकार कछुआ अंगों को सब ओर से समेट लेता है। श्री मद्भगवत् गीता के अध्याय 2 के श्लोक 58 में भगवान् ने आरोह पथ के पथिक के लिये कहा है –

यथा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥

इस आरोह के रास्ते पर चलने वालों के लिये और कोई रास्ता भी तो नहीं है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि जहाँ विषय का आकर्षण हुआ वहाँ उस इन्द्रिय को विषय से खींच लिया जाये। यह चूहे बिल्ली की दौड़ जीवन में रोज का खेल हो जाता है।

संयम से कुछ समय के लिये विषय शान्त होते प्रतीत होते हैं परन्तु विषयों से संयोग मिलते ही विस्फोट हो जाता है। आरोह मार्ग का साधक ज्वालामुखी के मुहाने पर पालथी मारकर बैठा है। जब तक उबलते हुए लावे को रोक सकता है रोकता है, फिर न रोक पायेगा विस्फोट को। बहुत दूर नीचे गिरेगा साधक। इसे आरोह मार्ग में पतन कहते हैं। बड़े-बड़े तपस्वियों के स्त्री के दर्शन मात्र से लुढ़क जाने का दृष्टान्त है। शृंगी ऋषि तो शान्ता के दर्शन भी न सह पाये। नारद मुनि भी राजकुमारी रमा की सुन्दरता के आगे व्याकुल हो गये। कामरूपी बारूद

*प्रभु के दर्शन से निवृति होती है।

में स्त्री सान्निध्य प्राप्त होने पर विस्फोट होने के अन्य पौराणिक उदाहरण भी मिलते हैं। पौराणिक कथाओं में भी और आज भी।

आरोह मार्ग पर चलकर आत्म विकास के पूर्णत्व को लाभ करना बहुत कठिन है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आरोह मार्ग में व्यक्तिगत पुरुषार्थ, व्यक्तिगत संकल्प, हठयोग, लययोग, राजयोग, ज्ञानयोग, विशुद्ध कर्मयोग, आत्म संयम, समुचित आहार-विहार, ब्रह्मचर्य, प्राणायाम, वैराग्य और गुरु की विशेष कृपा को प्राप्त करना वांछित है। विषय रस दब तो जाते हैं पर उनसे निवृत्ति नहीं होती। गुरुदेव ने **Evolutionary Outlook on Life** में लिखा है कि **Suppression of any kind is dangerous. The animal must come forth in any form.**

हमारा उद्देश्य आरोह मार्ग का विश्लेषण करना, इस साधना में उत्पन्न कठिनाइयों को उजागर करना नहीं है, न आलोचना करना न हताश करना है।

परन्तु यह निर्विवाद है कि काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, द्वेष, ईर्ष्या के दल-दल में फँसे हम गृहस्थ आश्रम वालों के लिये भी कोई सरल, सहज स्वाभाविक साधना पद्धति है जिस पर चलकर हम इन तथाकथित प्रपंचों से रहित अपना और समष्टि का अध्यात्म विकास करने के यन्त्र बन सकते हैं।

गुरुदेव ने हम ऐसे गृहस्थ आश्रम के प्राणियों के लिये भक्ति, समर्पण, 'राम' नाम जप की सरल, सहज साधना पद्धति निर्धारित की है।

ज्ञातव्य हो कि विश्व केन्द्र से आने वाली शक्ति धारा ही नीचे के केन्द्रों में जाकर उनका परिशोधन करती है और उनको विकास की ओर अग्रसर करती है। यह अवरोहण सभी केन्द्रों से होता है और सहस्रार से भी। सहस्रार की स्थिति सबसे ऊपर होने के कारण अवरोहण मुख्यतः यहीं से होता है। यहाँ से चली हुई धारा नीचे के केन्द्रों का विकास और नीचे के केन्द्रों का परिशोधन भी करती जाती है।

विश्व केन्द्र से आने वाली धारा अपने सूत्र में नीचे वाले केन्द्रों और कोषों को बाँध देती है। सभी संगठित इकाई के रूप में क्रियाशील होते हैं। गुरुदेव कहते हैं कि महाशक्ति ही आत्मशक्ति के विकास की प्रेरिका है। उसका सहज आकर्षण ही आत्मशक्ति को जगाता है और धीरे-धीरे विकसित करता चला जाता है। विकसित होती हुई शक्ति भी महाशक्ति को अपनी ओर खींचने लगती है और दोनों Gravitational Force की तरह समीप होती हुई अन्त में सहस्रार में साम्य स्थापित कर देती हैं। आध्यात्मिक साधन प्रथम खण्ड में अवरोह पथ के साधक को भगवती शक्ति में विश्वास होना अनिवार्य बताया गया है। प्रबल, सच्ची गम्भीर पुकार का जागरण।

आत्म तत्व तस राम पुकारे।
राम-राम रमकार मचारे॥
रोम रोम में रम जा म्हारे,
राम राम प्रति रोम पुकारे,
लगी लगन गुरुदेव कृपा रे॥

श्री मद्भगवत् गीता के अध्याय 2 के श्लोक 59 में श्री कृष्ण भगवान् ने इस मार्ग के विषय में सहज उपाय बताया है –

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्ज रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते॥

आहार अर्थात् विषय का सेवन न करने वाले देहधारी मनुष्य के लिये विषय भली प्रकार से हट जाते हैं परन्तु रस नहीं जाता। परमेश्वर का दर्शन हो जाने पर रस की भी निवृत्ति हो जाती है।

ज्ञातव्य है कि निराहार रहने से विषय तो नहीं पकड़ते परन्तु विषयों का रस नहीं जाता है जो रस स्वाद लगने का कारण होता है वही पकड़ का कारण होता है।

श्री भगवान् ने **'परम दृष्ट्वा निर्वतते'** का उपाय बताकर मानो गृहस्थाश्रम के प्राणियों के लिये सरल

उपाय के रूप में मार्ग प्रशस्त कर दिया। इस ब्रह्म वाक्य को क्रियान्वित करने हेतु प्रभु के संकल्प से ही प्यारे परम पूज्य स्वामी रामानन्द जी महाराज ने अवरोह पथ यानि भक्ति समर्पण की साधना पद्धति निर्धारित की है। आरोह मार्ग की कठिनाइयों एवं जटिलताओं का निवारण करते हुए उन्होंने लिखा है कि भक्ति और समर्पण के अवरोह पथ पर व्यक्ति पतन के भय से परे हो जाता है, विषय रस, राम रस में परिशोधित होता जाता है और भोग भी योग और योग भोग बन जाता है।

ऐसी स्थिति में भगवान् के दर्शन हो जाने से विषय रस से निवृत्ति सम्भव है। रस राज भगवान् का दर्शन कर लेने से फिर व्यक्ति को कौन सी चीज खींच पाती है। उसकी झाँकी मतवाला कर देती है।

परन्तु प्रभु दर्शन का तात्पर्य क्या है? क्या भगवान् के चतुर्भुज साकार दर्शन से है? ऐसा दृष्टिकोण सही नहीं है। प्रभु के दर्शन का अभिप्राय भागवती गुणों का साधक में सहज अवतरण से है। पूज्य गुरुदेव अपनी पुस्तक **Evolutionary Outlook on Life** में **The Master of Evolution** के अध्याय में प्रभु शक्ति के अवतरण का उल्लेख करते हुए लिखते हैं –

"She is always pouring herself into us. To know her is to love her. To have a glimpse of her, is to be prepared to surrender one's all at her feet. To understand her is to be prepared to aspire to become hers and only hers for ever.... This is the way to seek a living and full union with the Divine Mother."

प्रभु के दर्शन का तात्पर्य है कि –

ऐसी ज्योति जगा दो प्रभु जी,
मन शुद्ध बुद्धि से भर जाये,
हो उदय ज्ञान का सूरज ऐसा,
अज्ञान तिमिर उर हर जाये।
शक्ति अनन्त छिपी जो मुझमें,
पहचान सकूँ डर मर जाये,
सच्चिदानन्द का उमड़े सागर,
दुःख द्वन्द का भार बिखर जाये।

'परम दृष्ट्वा निवृर्तते' की व्याख्या करते हुए गुरुदेव लिखते हैं कि प्रभु दर्शन की प्राप्ति प्रभु कृपा, सन्त कृपा, अनन्य भक्ति से हो सकती है। प्रेम, लगन, पुकार, श्रद्धा, विश्वास इसके सम्बल हैं। अनन्य भक्ति मिलती है राम नाम के प्रताप से।

प्रभु कृपा के विषय में स्वामी जी अपनी पुस्तक **Evolutionary Outlook on Life** में लिखते हैं –

"From the elemental you have been upto the human stage, through vegetable and animal existence by the Master of Evolution. Super human status awaits you.'

अर्थात्

योनि जड़ वन पशु से उबारा है जिसने,
दिया तन मनुष का कि हो योग उससे।

उसकी अहैतुकी कृपा से – हमें आज सुन्दर, दुर्लभ मनुष्य शरीर मिला है।

विपुल हरि कृपा कर्म योनि मिली जब,
सभी शक्ति साधन सुबुद्धि समाये।

उसकी कृपा बरस रही है इसके लिये हमें प्रमाण की आवश्यकता नहीं है।

अनन्य भक्ति के लिये सन्त कृपा नितान्त आवश्यक है। स्वामी रामानन्द जी महाराज, जिन्हें हम गुरुदेव भगवान् सम्बोधित करते हैं, परम दयालु, प्रेम के अवतार हैं। सन्तप्त जनों के आध्यात्मिक विकास हेतु अवतार लिया था। स्थूल शरीर में न होने के उपरान्त भी वे आज भी हमारी बाँह पकड़ के विकास के मार्ग में आगे की ओर लिये जा रहे हैं। वे दीनबन्धु है और करुणा के सागर हैं। ऐसे सन्त को सतगुरु के रूप में पाकर हम धन्य हैं।

'परम दृष्ट्वा निवृतते' का अर्थ (जैसा हमने पहले उल्लेख किया है) कि परमेश्वर का दर्शन हो जाने पर रस की निवृत्ति हो जाती है। प्रभु दर्शन अनन्य भक्ति से और अनन्य भक्ति प्रभु कृपा से, सन्त कृपा से और प्रभु के नाम के प्रताप से प्राप्त होती है। प्रभु दर्शन, प्रभु कृपा व सन्त कृपा के विषय में हम संक्षेप में विचार कर चुके हैं।

अब हम प्रभु नाम के प्रताप की चर्चा करेंगे। प्रभु नाम का तात्पर्य जहाँ तक कि अवरोह मार्ग के हम साधकों का सम्बन्ध है 'राम नाम' से है, जो गुरुदेव ने हमें अपने प्रबल संकल्प से मन्त्र के रूप में प्रदान किया है। अतः भगवान् के नाम को हम राम नाम से मानते हैं। गुरुदेव ने पत्र पीयूष के पत्र संख्या 3 में लिखा है कि 'श्री राम पद में रमण करने का मेरी समझ में नाम से बढ़कर कोई साधन नहीं है।'

नाम जपन प्रभु प्रेम है, भक्ति समर्पण खान।
महाशक्ति अविरल बहे, है 'प्रसाद' सतज्ञान॥

गुरुदेव भगवान् ने जो साधना पथ हमें दिया है वह अति सरल, सबल और सहज है। इसके विपरीत आरोह मार्ग में साधक में Doership यानि कर्तापन का अहंकार प्रबल होता है, अवरोह मार्ग में भक्ति और समर्पण सहज में पनपता जाता है यानि Non-Doership अकर्तापन।

अवरोह मार्ग के सम्बन्ध में गुरुदेव ने गीता विमर्श के अध्याय 6 श्लोक 40 में कहा है –

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते।
न हि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति॥

भक्ति का मार्ग, समर्पण का मार्ग पतन की आशंका से रहित होता है। वह भोग को प्रभु से स्वीकार करता है। प्रभु मुखी हो जाने से निवृत्ति होती है। अन्तरात्मा चाह छोड़ देती है। क्रमशः मन बुद्धि प्राणादि भी वैसे ही हो जाते हैं, संघर्ष के लिये अवसर नहीं आता। पतन की समस्या नहीं होती। संयम का अभिमान नहीं होता। वासना का भार नहीं होता। दुर्गति का प्रश्न नहीं होता। जितना कर पायेगा, उतना तो आगे चल ही पायेगा। रुकने की सजा नहीं मिलती और एक सीमा लाँघ लेने पर लौट वह सकता नहीं। उसे आगे ही जाना होता है। कितना विलक्षण सरल, सहज, सशक्त मार्ग है अध्यात्म विकास के लिये पूज्य गुरुदेव का यह मार्ग अवरोह पथ। भजन पूजन के साथ विशोधित होती जाती है साधक की दृष्टि, बदल जाती है सृष्टि। धन्य हैं हम कि बैठे ठाले श्री मद्भगवत् गीता जी के दूसरे अध्याय के 59वें श्लोक **परम दृष्ट्वा निर्वतते** की स्थिति हमें गुरु कृपा से राम नाम के जप से दृष्टिकोण के परिर्वतन से सहज में प्राप्त होती जाती है।

– श्रीमती रमना सेखड़ी

शुभ समाचार

पूज्य गुरुदेव की असीम अनुकम्पा से हमारे वरिष्ठ साधक भैया श्री सुनील कान्त अग्रवाल जी की सुपुत्री नेहा का शुभ विवाह चिरंजीव ऋषभ के साथ दिनांक 7 मई 2023 को सम्पन्न हुआ। इस शुभ अवसर पर श्री सुनील कान्त ने गुरु चरणों में रु. 11000/- की सेवा अर्पित की है। समस्त साधना परिवार की गुरुदेव महाराज से विनती है कि नव युगल के भावी जीवन पथ को अपने शुभ आशीर्वाद से अलंकृत कर अनुग्रहीत करें व इस परिवार पर अपनी असीम कृपा सतत् बनाये रखें।

जीवन में सुखी कैसे रहें?

संसार का एक नाम 'दुःखालय' भी है। गीता के अध्याय 8 के श्लोक 15 में भगवान् श्रीकृष्ण ने संसार को **'दुःखालयमशाश्वतम्'** कहा है, अर्थात् यह अनित्य जगत् दुःखों से पूर्ण है। अतः स्पष्ट है कि इस संसार में जो भी जन्म लेता है, उसे दुःखों का सामना करना पड़ता है। उसे हमेशा ही दुःखों का भय सताता रहता है। यह भी सत्य है कि प्रत्येक मनुष्य दुखी जीवन से बचना चाहता है और जीवन भर सुख-शान्ति का जीवन जीने के लिये ईश्वर से कामना-प्रार्थना करता है। मनुष्य-जीवन में सुख-दुःख का आना-जाना एक स्वाभाविक क्रिया है। सुख के बाद दुःख और दुःख के बाद सुख क्रमशः जीवन में आते रहते हैं। मनुष्य न तो पूरे जीवन सुखी ही रहता है और न दुखी। यही प्रकृति का नियम है।

भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता के अध्याय 12 के श्लोक 17 में कहा है कि जो सभी प्रकार के सुख-दुःख में, सफलता और असफलता में सम रहता है, वह मुझे प्रिय है –

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः॥

गीता के अध्याय 2 के श्लोक 38 में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को जय-पराजय, लाभ-हानि और सुख-दुःख में समान रहने के लिये कहा है – **'सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ'**। उक्त दोनों श्लोकों में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन के माध्यम से संसार को ज्ञान दिया है कि मनुष्य को सभी प्रकार की सुखद और दुःखद परिस्थितियों में समभाव से रहना चाहिए।

वाल्मीकि रामायण में कहा गया है – **'दुर्लभं हि सदा सुखम्'** अर्थात् सदा सुख मिले यह दुर्लभ है। वेद व्यास जी ने कहा है – सुख के बाद दुःख और दुःख के बाद सुख आता है, कोई भी न तो सदैव दुःख पाता है और न निरन्तर सुख ही प्राप्त करता है। महाकवि गोस्वामी तुलसी दास जी ने कहा है –

तुलसी इस संसार में, सुख दुःख दोनों होय।
ज्ञानी काटे ज्ञान से, मूरख काटे रोय॥

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मनुष्य-जीवन में सुख और दुःख दोनों ही क्रमशः आते रहते हैं, इसलिये आवश्यक है कि हम न तो सुख में घमण्ड करें और न दुःख में दुखी रहें। सुख और दुःख को मेहमान समझकर स्वागत करें। दुःख में विचलित न होकर धैर्य के साथ सामना करें। यह समझें कि दुःख कुछ समय बाद नहीं रहेगा। जीवन में सुखी रहने के लिये निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए।

1. **आस्तिक बनिये** – आप ईश्वर के जिस रूप पर श्रद्धा करते हों, उसकी प्रार्थना करें। अपनी चिन्ता-परेशानी को दूर करने हेतु निवेदन करें। **'ईश्वर जो कुछ करता है – अच्छा ही करता है'** – इस सूत्र पर विश्वास करें। गीता का सार है – **शरणागति**। जो अनन्य भाव से भगवान् की शरण हो जाता है, उसे भगवान् सम्पूर्ण पापों और दुःखों से मुक्त कर देते हैं। गीता भगवान् श्रीकृष्ण की वाणी है। गीता के अध्याय 18 के श्लोक 58 में भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है – **'मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि'** अर्थात् मुझमें चित्त लगा लो फिर मेरी कृपा से तुम सारी कठिनाइयों को पार कर जाओगे। **'नामसंकीर्तन यस्य सर्वपापप्रणाशनम्'** भगवान् के नामों का संकीर्तन और चरणों में प्रणाम सारे पापों एवं दुःखों को सदा के लिये नष्ट कर देता है। सदैव स्मरण रखें कि संसार के क्लेश-दुःखों से पीड़ित हृदय की शान्ति के लिये ईश्वर की कृपा के सिवाय दूसरा कोई उपाय नहीं है। ईश्वर हमारी प्रार्थना अवश्य ही स्वीकार करेंगे – ऐसा मन में दृढ़-विश्वास होना चाहिए। श्रद्धापूर्वक की गयी प्रार्थना कभी निष्फल नहीं जाती। अतएव जीवन में सुख-शान्ति के लिये

आस्तिक बनिये, ईश्वर पर भरोसा करिये। दिन का प्रारम्भ प्रार्थना से करें और अन्त प्रार्थना से करें। नीति शास्त्र के एक श्लोक के अनुसार – **'कोटिं त्यक्त्वा हरिं स्मरेत्'** अर्थात् करोड़ काम छोड़कर भगवान् का स्मरण करना चाहिए।

2. माता-पिता की सेवा करें – माता-पिता प्रत्यक्ष देव हैं। उनकी सेवा (तन-मन-धन से) करनी चाहिए और उनका आशीर्वाद प्राप्त करना चाहिए। माता-पिता की उपेक्षा कर उनको दुःख पहुँचाना अधर्म एवं अपराध है। माता-पिता के आशीर्वाद से ही मनुष्य को जीवन में सुख-शान्ति और सफलता प्राप्त हो सकती है। माता-पिता को सुख देना ही सुखी रहने का सर्वोत्तम उपाय है। **'सुख बाँटिये-सुख मिलेगा'** इस उक्ति का अपने जीवन में अक्षरशः पालन करना चाहिए। श्रीरामचरितमानस की शिक्षा है –

सुनु जननी सोइ सुतु बड़भागी।
जो पितु मातु बचन अनुरागी॥

(रा.च.मा. 2/41/7)

अनुचित उचित बिचारु तजि जे पालहिं पितु बैन।
ते भाजन सुख सुजस के बसहिं अमरपति ऐन॥

मनुस्मृति में कहा है कि स्मरण रखें –

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम्॥

जो अपने से बड़ों (माता-पिता-गुरुजन) – को नित्य प्रणाम करता है, उनकी सेवा करते हुए आशीर्वाद प्राप्त करता है, उसके आयु, विद्या, यश तथा बल – ये चारों बढ़ते हैं। पद्म पुराण में बताया गया है कि इस लोक और परलोक के कल्याण के लिये माता-पिता के समान कोई तीर्थ नहीं है।

धर्म ग्रन्थों एवं सन्तों के वचनों का सार यही है कि माता-पिता की तन-मन-धन से सेवा करो और सदैव उनको खुश रखो तभी जीवन में सुख-शान्ति प्राप्त करोगे।

3. सुख दो, सुख मिलेगा – सन्त तुलसी ने कहा है कि सुख देने पर सुख मिलेगा और दुःख देने पर दुःख मिलेगा –

चार वेद षट् शास्त्र में बात मिली हैं दोय।
सुख दीन्हे सुख होत है दुःख दीन्हे दुःख होय।।

दूसरों को सुख पहुँचाना, सुखी करना ही स्वयं सुखी रहने का उपाय है। **'जो दोगे वही तो मिलेगा'** और **'जैसा बोओगे वैसा काटोगे'** इन सूक्तियों के अनुसार दूसरों को प्रसन्नता, सुख और प्रेम देने पर ही जीवन में प्रेम और सुख की प्राप्ति होती है।

4. सदैव सन्तुष्ट रहें – गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है – **'सन्तुष्टः सततम्'** अर्थात् प्रत्येक परिस्थिति में निरन्तर सन्तुष्ट रहें। **'सन्तोषः परमं सुखम्'** सन्तोष ही परम सुख है। हमारे पास जो कुछ है, उसी में सन्तुष्ट रहें, तभी सुख मिलेगा। दुनिया में बहुत-से लोग हैं, जिनके पास हमसे बहुत कम है। कहा गया है कि सन्तोष ही सबसे बड़ा सुख है और असन्तोष ही सबसे बड़ा दुःख है। **'जब आवे संतोष धन सब धन धूरि समान'** अर्थात् सन्तोष ही सबसे बड़ा धन और सुख है। जिसे अपने परिश्रम और पुरुषार्थ से प्राप्त धन में सन्तोष नहीं है, वह हमेशा अशान्त रहता है और **'अशान्तस्य कुतः सुखम्?'** अर्थात् अशान्त व्यक्ति को सुख कहाँ? इसलिये जीवन में सुखी रहने के लिये अपनी ईमानदारी की कमाई में सन्तुष्ट रहिए।

5. धैर्य रखें – हितोपदेश में कहा गया है – **'विपदि धैर्यम्'** विपत्ति अर्थात् बुरा समय आने पर धीरज रखें। धीरज (धैर्य) रखने पर सभी प्रकार की समस्याओं से मुक्ति मिल सकती है। धैर्य रखने और सहनशील बनने से मनुष्य कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी हिम्मत नहीं हारता। जीवन में समस्यायें तो आती रहती हैं और हमेशा रहेंगी। अगर हम समस्याओं से डरकर तनावग्रस्त या दुःखी रहते हैं तो हमारे जीवन की शान्ति नष्ट हो जायेगी। इसलिये बुरे समय को धैर्यपूर्वक सहन करें और अच्छे समय की प्रतीक्षा करें।

6. ईमानदारी से धन कमाओ और मितव्ययी

बनो – कहा गया है कि **'धन जीवन के लिये कमाओ, न कि जीवन धन एकत्र करने में गँवा दो'।** उक्त सूक्ति का तात्पर्य यही है कि मनुष्य को अपने परिवार के लिये (जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु) धन कमाना आवश्यक है, परन्तु धन-संग्रह की तृष्णा में अपनी एवं परिवार के सदस्यों की सुख-शान्ति नष्ट न कर दो। धन की तीन गतियों (दान-भोग और नाश) – में दान सर्वश्रेष्ठ गति है। जो व्यक्ति न स्वयं ही उपभोग करता है, न दान देता है, उसके धन की तीसरी गति 'नाश' होती है। महाभारत में कहा गया है कि मनुष्य धन का दास है, परन्तु धन किसी का दास नहीं।

कठोपनिषद् में कहा है – **'न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः'** अर्थात् मनुष्य की तृप्ति धन से नहीं होती। मनुष्य अधिक धन के संग्रह में अपना सुख और शान्ति नष्ट कर देता है। अधिक धन संग्रह के लोभ में खोटे साधनों अर्थात् पाप की कमाई करने से भी नहीं चूकता और उसका परिणाम भी दुःखदायी होता है। अतएव ध्यान रहे कि धन का उपार्जन करने में और उसका उपयोग करने में पवित्रता हो। धन मनुष्य के पास हमेशा एक समान नहीं रहता है। इसलिये धन का सदुपयोग करो। अधिक धन-संग्रह की तृष्णा में अपनी शान्ति नष्ट न कर दो। अधिक धन को विष और मद भी कहा गया है। इस मद से बचने में ही भलाई है – **'कनक कनक तें सौ गुनी मादकता अधिकाय।'** अतएव मितव्ययी बनिये, आवश्यकतायें कम करिये और अपनी आय के अनुसार ही खर्च करिये। आय से अधिक खर्च करने की आदत से मनुष्य की सुख-शान्ति नष्ट होती है। बुरे समय के लिये बचत अवश्य करें। जीवन के इस मूल-मन्त्र को हमेशा ध्यान में रखना और पालन करना ही श्रेष्ठ है।

7. स्वस्थ रहें – शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ रहने पर ही कोई मनुष्य अपने उत्तरदायित्व को पूरा करते हुए सुखी रह सकता है। शारीरिक और मानसिक रूप से हमेशा सक्रिय रहिए। प्रातः-सायं भ्रमण का अभ्यास करिये। ऐसा करने पर अनेक बीमारियों – मधुमेह, रक्तचाप, हृदयरोग, कब्ज आदि से बचा जा सकता है। तात्पर्य यह कि प्रतिदिन शारीरिक परिश्रम होना आवश्यक है। प्रकृति-प्रेम, भ्रमण, संगीत, बागवानी, खेल, पठन, चित्रकारी आदि में अपनी रुचि के अनुसार भाग लीजिये। अपने को व्यस्त रखिये। भोजन में संयम रखें। घी-तेल, शकर, फास्ट फूड से बचना भी आवश्यक है। इन पदार्थों की अधिकता स्वास्थ्य के लिये घातक है। इन बातों पर ध्यान देने और इनका पालन करने पर आप स्वस्थ रह सकते हैं और स्वस्थ रहकर अपने जीवन को सुखमय बना सकते हैं। मानसिक रूप से स्वस्थ रहने के लिये क्रोध, चिन्ता, विषाद, तनाव, निराशा, अहंकार आदि दोषों से दूर रहें। धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन करें। निरोग रहना पहला सुख माना गया है **'पहला सुख निरोगी काया।'** यदि आप धनवान् हैं, करोड़ों की सम्पत्ति के स्वामी हैं, परन्तु आप अनेक रोगों से ग्रसित हैं तो आप सुखी नहीं हैं। इसलिये सदैव स्वस्थ रहिए। अपने स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दीजिये।

8. आशावादी बनो – हमेशा आशावादी रहना चाहिए। उज्ज्वल भविष्य और अपने लक्ष्य में सफलता प्राप्त होने की कामना करनी चाहिए। आशा जवानी की प्रतीक है और निराशा बुढ़ापे की निशानी है। आशावादी पुरुष बीमार होने पर शीघ्र स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करता है। निराश रहने से कभी किसी का भला नहीं हुआ। मन से हमेशा आशावादी और उत्साहपूर्ण बनो। मन को हारने न दो। हमेशा स्मरण रखो **'मनके हारे हार है मनके जीते जीत'** मन में उत्साह रहने पर कठिन कार्य भी आसानी से पूरे हो जाते हैं। निराशावादी और उत्साहहीन व्यक्ति आधे-अधूरे मन से कार्य को करता है तो उसे असफलता ही मिलती है। अपने को कमजोर और हीन न समझें। अपना मनोबल मजबूत रखें। सदैव आत्म-विश्वास रखें कि

आप यह कर सकते हैं। नकारात्मक विचार रखने वाले मित्रों से दूर रहें। हमेशा प्रसन्न रहें।

9. भूलो और क्षमा कर दो – पारिवारिक जीवन में परिजनों-मित्रों-सम्बन्धियों से कभी-कभी मतभेद भी हो सकता है। मतभेद उत्पन्न होने पर शान्तिपूर्वक सुलझाने का प्रयास करें। बातचीत बन्द कर देना, तनाव में रहना अच्छा नहीं होता। अप्रिय बातों को भूलना और क्षमा कर देना सर्वोत्तम नीति है। क्षमा कर देने पर शान्ति का अनुभव होता है, परस्पर प्रेम की भावना बढ़ती है। सम्बन्धों में निकटता आती है। अपनी गलतियों पर क्षमा माँगने में भी संकोच न करें।

10. परोपकारी बनें – दूसरों की मदद करने में पीछे न रहें। तन-मन-धन से निर्धन, अपाहिज, रोगी की यथाशक्ति मदद करें। जरूरतमन्दों की मदद करना ही धर्म है। **'पर हित सरिस धर्म नहिं भाई'** का पालन करें। स्मरण रखें कि सुख बाँटने से सुख बढ़ता है। **'परोपकारः पुण्याय'** (वेदव्यास) परोपकार अर्थात् दूसरों की भलाई करना, सुख देना ही पुण्य कार्य है। अतएव पीड़ितों की निःस्वार्थ भाव से सेवा करना, सुख पहुँचाना ही सबसे उत्तम पुण्य कार्य है। स्मरण रखिये –

परहित बस जिन्ह के मन माहीं।
तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं॥

(रा.च.मा. 3/31/9)

– श्री रमेश चन्द्र जी बादल

कल्याण नवम्बर 2014, भाग 88, संख्या 11 से उद्धृत

दृष्टिकोण का परिवर्तन

दृष्टिकोण का परिवर्तन ही सबसे बड़ा परिवर्तन है। अपनी सीमा के संकीर्ण दायरे को बढ़ाकर विशाल क्षेत्र तक विकसित करने का नाम ही विकास है। वासना और तृष्णा की क्षुद्रता की उपेक्षा करते हुए कर्त्तव्यपालन और परमार्थ की आकांक्षाएँ जाग्रत करना ही सच्चा जागरण है। कुविचारों और दुर्भावनाओं के काम, क्रोध, लोभ, मोह के बंधनों को तोड़ डालना – इसी का नाम मुक्ति है। सन्तोष, संयम और सच्चाई, सज्जनता और शान्ति की सन्तुलित मनोभूमि बनाये रखना ही स्वर्ग है। यह अपनी धरती स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है। यह अपना मानव शरीर देवताओं से उत्तम है। यह मनुष्य जन्म ईश्वर का हमें सबसे बड़ा अनुग्रह और वरदान है। इस अलभ्य अवसर का, इस परम सौभाग्य का समुचित सदुपयोग करते हुए वह करना चाहिए, जो करने योग्य है। वह सोचना चाहिए, जो सोचने योग्य है। वह चाहना चाहिए, जो चाहने योग्य है। उस मार्ग पर चलना चाहिए, जो चलने योग्य है।

– अखण्ड ज्योति, जुलाई 2020 से उद्धृत

बाल शिविर 2023 का विवरण

साधना धाम में प्रत्येक वर्ष ग्रीष्म अवकाश के मध्य में विद्यार्थियों के लिए बाल शिविर का आयोजन किया जाता है। इस वर्ष शिविर का आयोजन 7 जून 2023 से लेकर 11 जून 2023 तक किया गया जिसमें विभिन्न स्थानों से आये लगभग 70 बच्चों ने बढ़ चढ़कर भाग लिया। बाल शिविर का आरम्भ 7 जून को सायं 4:00 बजे हुआ, जिसमें साधना परिवार के अध्यक्ष श्री विष्णु कुमार जी गोयल ने शिविर का कार्य सुचारु रूप से चलाने हेतु कार्यकारिणी समिति का गठन किया। वयस्क साधकों को विभिन्न कार्यों की जिम्मेदारी दी गई। शिविर के संचालक के रूप में दिल्ली से आए श्री अविनाश जी को नियुक्त किया गया।

इस वर्ष बालकों को भी प्रात:कालीन ध्यान की बैठक में सम्मिलित किया गया। 5:30 बजे आरती होती और उसके पश्चात शिकंजी तथा चाय का वितरण। प्रात: 6:30 बजे श्री अविनाश जी व सरस्वती विद्या मन्दिर बीसलपुर से आये दोनों अध्यापक सभी बालकों को नीलधारा ले जाकर सैर तथा योगाभ्यास कराते। उसके बाद धाम में वापस आकर बालक स्नान आदि से निबट कर नाश्ता करते और 9:00 बजे साधना मन्दिर में गीता पाठ के लिए उपस्थित होते थे। पुजारी पण्डित योगेश जी बालकों से गीता पाठ का उच्चारण कराते। तत्पश्चात वरिष्ठ साधक मंच से अपने अनुभवों से बालकों का ज्ञानवर्धन करते। 10:00 बजे से 11:00 बजे तक व्यक्तित्त्व विकास की कक्षा होती थी जिसमें वरिष्ठ साधिका श्रीमती रमना सेखड़ी जी पूज्य स्वामी जी की जीवनी के आधार पर बालकों का मार्गदर्शन करती थीं। दिन का भोजन 12:00 बजे दिया जाता था जिसमें बालकों के लिए विभिन्न व्यंजन बनाये जाते थे। दोपहर 1:00 बजे से 2:00 बजे तक बालकों को नाटक व गायन आदि का अभ्यास करने का समय दिया जाता था जिसका प्रदर्शन विनोद गोष्ठी में किया जाता था।

रात्रि भोजन के बाद विनोद गोष्ठी का आयोजन होता था जिसमें प्रत्येक वर्ग के बालकों ने नाटक, कविताएँ एवं चुटकले आदि प्रस्तुत किये। शिविर के चारों दिन इसी प्रकार की गतविधियाँ चलती रहीं।

दिनांक 11 जून 2023 को प्रात: ध्यान की बैठक के बाद स्वामी जी के चरणों में पुष्प एवं माला अर्पण का कार्यक्रम हुआ। उसके पश्चात बड़ों और बालकों के द्वारा लाई हुई मिठाईयों का भोग लगाया गया। गुरुदेव महाराज की आरती के पश्चात सभी बालकों को पुरस्कार स्वरूप अध्यक्ष श्री विष्णु कुमार गोयल जी तथा सचिव श्रीमती रमना सेखड़ी जी के कर कमलों द्वारा प्रमाण-पत्र वितरित किये गये।

अन्त में माननीय अध्यक्ष जी ने शिविर में भाग लेने वाले सभी वयस्क साधकों का आभार व सभी बालकों को आशीर्वाद देकर विदा किया। श्री अविनाश ग्रोवर जी का विशेष धन्यवाद किया जिन्होंने अपनी शैक्षिक योग्यता का सदुपयोग करते हुए बाल शिविर का अत्यन्त सुन्दर एवं सुनियोजित ढंग से संचालन किया।

– श्री अविनाश ग्रोवर

साधना परिवार की कार्यकारिणी बैठक का विवरण

दिनांक 2 जुलाई 2023 को साधना धाम हरिद्वार के कार्यालय में कार्यकारिणी बैठक श्री विष्णु कुमार जी गोयल की अध्यक्षता में प्रातः 10:30 बजे हुई। बैठक में उपस्थिति निम्न प्रकार रही –

1.	श्री विष्णु कुमार गोयल	अध्यक्ष
2.	श्री अनिल कुमार मित्तल	उपाध्यक्ष
3.	श्रीमती रमना सेखड़ी	सचिव
4.	श्री अनिरुद्ध अग्निहोत्री	कोषाध्यक्ष
5.	श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल	सदस्य
6.	श्री हरपाल सिंह राजपूत	सदस्य
7.	श्रीमती रेवा भाम्बरी	सदस्य
8.	श्रीमती कृष्णा भण्डारी	सदस्य
9.	श्रीमती सोमवती मिश्रा	सदस्य
10.	श्रीमती नीता सहगल	सदस्य
11.	श्री सुधीर कान्त अग्रवाल	सदस्य
12.	श्री रमेश जयसवाल	सदस्य
13.	श्री रविकान्त भण्डारी	प्रबन्धक
14.	श्री कृष्ण अवतार अग्रवाल	विशेष आमन्त्रित
15.	श्री विजेन्द्र गौड़	विशेष आमन्त्रित
16.	श्री संजय सेखड़ी	विशेष आमन्त्रित
17.	श्री मोहित मित्तल	सदस्य
18.	श्री अजीत अग्रवाल	विशेष आमन्त्रित

पूज्य गुरुदेव जी की वन्दना के पश्चात बैठक की कार्यवाही प्रारम्भ की गई।

सर्वप्रथम दिनांक 18 अप्रैल 2023 को आहुत पिछली बैठक की कार्यवाही समस्त सदस्यों को पढ़कर सुनाई गई। सभी सदस्यों ने इसका अनुमोदन किया। कार्यसूची के अनुसार बिन्दुवार विचार विमर्श किया गया।

1. दिगोली तपस्थली में निर्माण कार्य पर रिपोर्ट देते हुए कार्यकारिणी सदस्य श्री अनिल चन्द्र मित्तल एवं श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल जी द्वारा सूचित किया गया कि बरामदे एवं रसोई का कार्य बढ़ने के कारण अतिरिक्त कार्य करवाना है। इसके लिये सूची के अनुसार कार्य कराने पर सहमति हुई तथा यह निर्णय लिया गया कि इस कार्य को 31 जुलाई तक पूर्ण कराया जाये।
2. साधना धाम हरिद्वार में मरम्मत व निर्माण कार्य की रिपोर्ट देते हुए श्री रवि कान्त भण्डारी जी द्वारा कार्य की पूर्णता की सूचना दी गई। धाम में भवन की स्थिति पर किसी तकनीकी विशेषज्ञ द्वारा सर्वे कराने पर भी सहमति हुई।
3. दिगोली के बाड़ेछीना में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में स्वामी रामानन्द साधना परिवार का खाता संख्या 11524618385 है। वह श्री ओम प्रकाश सेखड़ी जी के स्वर्गवास के बाद परिचालन में नहीं है। उपरोक्त खाते को पुनः संचालित कराने के लिये जो भी औपचारिकतायें आवश्यक हों उन्हें पूरा करके खाता संचालित करने का निर्णय लिया गया। खाते के संचालन हेतु – 1. अध्यक्ष श्री विष्णु कुमार गोयल, 2. उपाध्यक्ष श्री अनिल चन्द्र मित्तल एवं 3. कार्यकारिणी सदस्य श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल को कार्यकारिणी द्वारा संयुक्त रूप से संचालित किये जाने का निर्णय लिया गया। खाते का संचालन उपरोक्त में से किन्हीं दो अधिकृत संचालनकर्ताओं द्वारा किया जा सकेगा।
4. मीरा जी की पुस्तक का विमोचन गुरु पूर्णिमा के दिन किया जाने का निर्णय लिया गया।
5. मन्दिर में अस्थियाँ न ले जाने हेतु जनरल बॉडी मीटिंग के दिनांक 20.4.2023 के प्रस्ताव पर कार्यकारिणी में विस्तृत चर्चा हुई। सदस्यों में सहमति न बनने के कारण इस विषय पर आगामी जनरल बॉडी मीर्टिंग में पुनर्विचार करने का निर्णय लिया गया।
6. पहचान पत्र के विषय में श्री अनिरुद्ध अग्निहोत्री द्वारा सूचित किया गया कि पहचान पत्र बनने

की प्रक्रिया प्रारम्भ हो चुकी है और इसके लिये विभिन्न केन्द्रों से भरे हुए फार्म मंगवाने पर सहमति हुई।

7. अध्यक्ष जी ने प्रस्ताव रखा कि शिविर में होने वाले भोजन प्रसाद, भोग व साज सज्जा आदि का सम्पूर्ण व्यय शिविर में भाग लेने वाले साधकों द्वारा ही वहन किया जाये जिससे कि धाम पर इसका भार न पड़े।
8. सभी शिविरों में भोजन की व्यवस्था सामान सहित ठेकेदार (कैटरर) द्वारा कराने का निर्णय सर्वसम्मति से लिया गया।
9. साधना धाम हरिद्वार में आवास के लिए नियम बनाने हेतु एक उपसमिति का गठन हुआ जिसमें निम्नलिखित सदस्यों को नामित किया गया –

1. श्री आर.सी. गुप्ता संयुक्त सचिव
2. श्री अनिल चन्द्र मित्तल उपाध्यक्ष
3. श्री अनिरुद्ध अग्निहोत्री संयोजक
4. श्रीमति नीता सहगल सदस्य कार्यकारिणी

10. अध्यक्ष महोदय ने सूचित किया कि धाम में सफाई निरीक्षण एवं अन्य व्यवस्थाओं को सुचारु रूप से चलाने हेतु श्री रमा शंकर जी को नियुक्त किया गया है जिसका सर्वसम्मति से अनुमोदन किया गया।

इसके पश्चात् माननीय अध्यक्ष महोदय ने समस्त कार्यकारिणी सदस्यों का आभार व्यक्त किया और अन्त में गुरुदेव महाराज का भोग लगाकर बैठक समाप्ति की घोषणा की गई।

अध्यक्ष **सचिव**

सद्गृहस्थ कौन है?

एक सन्त तीर्थयात्रा करते हुए वृंदावन धाम की ओर रवाना हुए। वृंदावन से कुछ मील पहले ही रात हो गई। उन्होंने सोचा कि रात पास के गाँव में बिताई जाये, सवेरे उठकर वृंदावन चल देंगे। उनका कड़ा नियम था कि वे जल भी उसी घर का ग्रहण करते थे – जिसका खान-पान, आचार-विचार पवित्र हों। किसी ने उन्हें बताया कि उस सीमा के इस गाँव में सभी कृष्णभक्त वैष्णव रहते हैं। उन्होंने गाँव के एक घर के आगे खड़े होकर एक व्यक्ति से कहा – ''भाई मुझे रात बितानी है, परन्तु मेरा नियम है कि मैं शुद्ध आचार-विचार वाले व्यक्ति के घर ही भिक्षा तथा जल ग्रहण करता हूँ। क्या मैं रातभर आपके घर में ठहर सकता हूँ।''

उस व्यक्ति ने हाथ जोड़कर कहा – ''महाराज! मैं तो नराधम हूँ। मेरे सिवा अन्य सभी लोग परम वैष्णव हैं, फिर भी यदि आप मेरे घर को अपने चरणों से पवित्र करेंगे तो मैं स्वयं को भाग्यशाली मानूँगा।'' सन्त आगे बढ़ गये। दूसरे व्यक्ति ने भी यही कहा और आगे बढ़ने पर अन्य व्यक्तियों ने भी स्वयं को निकृष्ट और अन्यों को श्रेष्ठ बताया। सन्त समझ गये कि इस गाँव के सभी लोग अति विनम्र व परम वैष्णव हैं। सन्त एक सद्गृहस्थ से बोले – ''भाई! नीच तुम नहीं, मैं ही हूँ तथा तुम्हारे घर का अन्न-जल ग्रहण कर मैं पवित्र हो जाऊँगा।''

गुरु पूर्णिमा शिविर 2023 - विवरण

गुरु पूर्णिमा शिविर का शुभारम्भ दिनांक 28 जून 2023 को हुआ और पूर्ति 3 जुलाई 2023 को। जाने वाले साधकों को मार्ग का भोजन देकर विदा किया गया। शिविर में 140 साधक भाई-बहनों ने भाग लिया था जिनमें से कुछ साधक भागवत कथा के लिये ठहर गये थे।

भागवत कथा दिनांक 5 से 11 जुलाई 2023 तक चली। कथामृत का पान हमारे पुजारी श्री योगेश जी पोखरिया द्वारा प्रतिदिन प्रातः 9:00 से 11:30 बजे व सायं 3:00 से 5:30 बजे कराया गया।

प्रवचन सार

श्री विजयेन्द्र भण्डारी जी

अपने प्रवचन के आरम्भ में श्री भण्डारी जी ने गुरु नानक देव जी का भजन सुनाया जिसके बोल इस प्रकार हैं –

मैं नाहीं प्रभु सब कुछ तेरा।
सब कुछ तेरा साईयाँ सब कुछ तेरा॥

इसके बाद एक और भजन सुनाया जिसके बोल हैं –

रे मन प्रभु से प्रीति करो .....

गुरु कृपा की महिमा का वर्णन करते हुए उन्होंने कहा कि गुरु के दिखाये हुए मार्ग पर चलने से प्रभु की प्राप्ति होती है और हमारे गुरुदेव तो साक्षात् अवतार हैं। यह हमारा सौभाग्य है कि हमें ऐसे गुरु द्वारा नाम का दान दिया गया है। हमारा कर्तव्य है कि अधिक से अधिक नाम जप करके हम अपने गुरु के प्रति कृतज्ञ होते हुए साधना करें और अपना जीवन सफल बनायें।

शिविर के महत्त्व को बताते हुए श्री भण्डारी जी कहते हैं कि शिविर में आना उतना आवश्यक नहीं है जितना यहाँ आकर सीखना है। हम दूसरों की निन्दा न करें, बाकी तो गुरुदेव की कृपा होने पर ही कुछ प्राप्त होना है। हमारे पूर्वजों ने बड़े प्रयासों से हमारे लिये पुस्तकों का ज्ञान दिया है जिससे लोग ईश्वर की सच्चाई को जानें और उस दिशा में जाने का प्रयास करें। ईश्वर हर जगह विद्यमान है। वह राजा भी है और प्रजा भी; वह गुरु भी है और शिष्य भी। उसी की शक्ति से यह ब्रह्माण्ड चल रहा है। जिधर भी देखो, वही है। साधुओं में ही गुरु नानक जी ने प्रभु को पाया।

राम राम जप करते हुए ही प्रभु की प्राप्ति होनी है। यह समझना आवश्यक है कि किसी से वैर नहीं रखना है। उदाहरण देकर बताते हैं कि एक व्यक्ति जंगल में तपस्या कर रहा था। नारद मुनि उधर से गुजरे तो उन्होंने बताया कि दस जन्म में प्रभु की प्राप्ति होगी। यह सुनकर तपस्वी निराश होकर वापस चला गया। आगे चले तो दूसरा तपस्वी मिला। उसके पूछने पर नारद जी ने बताया कि उसको सौ जन्मों के बाद ईश्वर की प्राप्ति होगी। यह सुनकर दूसरा तपस्वी आनन्दित होकर और लगन से नाम जप करने लगा। इसलिये नाम जप करते रहो, प्रभु की प्राप्ति अवश्य होगी।

श्री रमा शंकर कौशिक जी

श्रीमद्भगवद्गीता में हमारे अन्दर उठने वाली हर समस्या का समाधान है और हर प्रश्न का उत्तर है। गीता उपनिषदों का सार है। गीता जहाँ कर्मयोग का ज्ञान देती है वहीं ज्ञानयोग भी सिखाती है। गीता भगवान् के श्रीमुख से निकली है। प्रथम अध्याय में धृतराष्ट्र संजय से युद्ध का आँखों देखा हाल सुनते हैं और पूरे ब्रह्माण्ड में होने वाली घटनाओं का वर्णन

उन्हें प्राप्त हुआ है।

गीता का आरम्भ अर्जुन के मोह से होता है। भगवान् कहते हैं कि अर्जुन तेरे अवसाद का कारण तेरा मोह ही है। युद्ध में उपस्थित योद्धाओं को तू अपना समझता है जबकि अपना कोई भी नहीं है। इस बात को एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है –

एक व्यक्ति को अपने महल से बहुत मोह था। एक बार उसके देखते देखते उस महल में आग लग गई जिससे उस व्यक्ति को बहुत दु:ख हुआ। बाद में उसे पता लगा की उस मकान का तो सौदा हो चुका है और अब यह मकान किसी और का है तो उसका सारा दु:ख भाग गया। एक और उदाहरण द्वारा समझाया गया कि किस प्रकार मोह ही सब दु:खों का कारण है। इसी तरह धृतराष्ट्र आँखें न होते हुए भी सब कुछ सुन रहे थे और उसके मन तथा बुद्धि भी जागृत थे। युद्ध में अपने पुत्रों की विजय की प्रबल आकांक्षा तो थी परन्तु मन बेचैन था क्योंकि वह जानता था कि सत्य पाण्डवों के साथ है और उनको हराना कठिन है।

गीता के अध्याय 12 में यह बताया गया है कि सुख और दु:ख में एक समान रहना है। आपके द्वारा किये गये कर्म ही आपका फल निश्चित करेंगे। भगवान् श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि कर्म तुम्हें ही करना है इसलिये तुम युद्ध करो। परिणाम देना मेरा कार्य है।

गीता एक सम्पूर्ण ग्रन्थ है। सम्पूर्ण विश्व हमारी ओर देख रहा है। हमारा सनातन धर्म हर देश में स्वीकार्य हो रहा है। आइये हम अपनी आने वाली पीढ़ी का मार्गदर्शन गीता के माध्यम से करने का प्रयास करें।

बहन कृष्ण कान्ति जी

गीता के महत्त्व को बताते हुए बहन कृष्ण कान्ति जी कहती हैं कि गीता में भगवान् कृष्ण अर्जुन को जो भी बताते हैं वो हमारे कल्याण के लिये ही बताते हैं। भगवान् कहते हैं कि कर्म करना अनिवार्य है। अर्जुन पूछते हैं – हे केशव, हमें ऐसा कर्म बताओ जिससे हमारा कल्याण हो। गीता अध्याय 3 में भगवान् कहते हैं कि तू कर्म कर परन्तु आसक्त होकर नहीं। काम हम अवश्य करें परन्तु फल के बारे में न सोचें। भगवान् हमारा हित हम से ज्यादा सोचते हैं। हमें तो अपना सारा भार भगवान् के हाथों में सौंप देना है यह कहते हुए –

अब सौंप दिया इस जीवन का
सब भार तुम्हारे हाथों में।
उत्थान पतन अब मेरा है
भगवान् तुम्हारे हाथों में॥

हमें हमारा कार्य उन्हें समर्पित करते जाना है। हमारा कल्याण निश्चित है।

बहन रमना सेखड़ी जी

कुरुक्षेत्र में महाभारत होने का कारण था धृतराष्ट्र का पुत्र मोह। वह न केवल नेत्रों से अंधा था, उसकी बुद्धि पर भी मोह का पर्दा पड़ा हुआ था। ऊपर से उसकी पत्नी गांधारी ने भी अपनी आँखों पर पट्टी बाँध ली जिसके कारण वह भी उसका मार्गदर्शन करने में असमर्थ रही। कौरव पाँच गाँव तक पाण्डवों को देने के लिये तैयार नहीं थे। कौरव बुराई का प्रतिनिधित्व करते हैं और पाण्डव सत्य का।

गीता के अध्याय 5 के श्लोक 3 की व्याख्या करते हुए उन्होंने समझाया कि हमें अपना कर्म छोड़ना नहीं है, करते चले जाना है। प्रभु अच्छे कर्म का फल अच्छा ही देते हैं। न किसी से द्वेष करना है और न ही किसी की कामना करनी है। प्रभु आपके हित के लिये पहले आपका अभिमान हरते हैं।

अगर हम भक्त बनना चाहते हैं तो राग द्वेष और बन्धन से मुक्त होना होगा, अन्यथा आवागमन का चक्र चलता रहेगा। बन्धन तो मन का है और हम स्वयं ही इसमें फँसे हुए हैं। गुरुदेव ने हमें

यह रास्ता दिया है, इसी पर चल कर हमें मुक्ति मिलनी है।

कर्म को साधन मानना है, बन्धन नहीं। अनासक्त होकर कर्म करना है। प्रभु ने हमारा हाथ पकड़ लिया है और उनका नाम लेने से हमारे संस्कार क्षीण होते चले जाते हैं। राम नाम में अतुल्य शक्ति है। संस्कारों का नितान्त क्षय होना अत्यन्त आवश्यक है।

आचार, विचार एवं आहार का संयम भी अत्यन्त आवश्यक है, उससे दिनचर्या संयमित रहती है। पारस पत्थर की तरह हमें अपने प्रभु के सम्पर्क में आकर स्वर्ण की तरह बनना है। हमें अपनी इच्छाओं को काबू में रखते हुए साधना करनी है। चेतना के जागृत होते ही संस्कारों का क्षरण आरम्भ हो जाता है। यह गुरु कृपा से ही सम्भव है। हमें आस्था निष्ठा से गुरु के प्रति समर्पित रहना है।

गीता के छठे अध्याय के 8वें श्लोक का पाठ करते हुए उन्होंने इस प्रकार व्याख्या की –

जिसका अन्त:करण ज्ञान-विज्ञान से तृप्त है, जिसकी स्थिति विकार रहित है और जिसकी इन्द्रियाँ भली भाँति स्थिर हैं तथा नियन्त्रण में हैं अर्थात् जिसने इन्द्रियों को जीत लिया है, वह प्रभु से युक्त होकर योगी हो गया है।

राम नाम में बहुत बल है, उससे निर्मलता आती है। गुरुदेव का कहना है कि शिविर के दिनों में नियमों का पालन करते हुए नाम जप करना है। कोई साधक एक दूसरे से बात नहीं करे। पूर्ण समर्पण के साथ प्रभु की पुकार हो, इसी में कल्याण है।

इसके पश्चात गीता के तेरहवें अध्याय के 7वें श्लोक की व्याख्या की।

बहन मीरा दुबे जी

गुरु की महिमा का वर्णन करते हुए कहा कि हम अपने गुरु से प्रभावित होकर यहाँ आये हैं। एक साधक के पत्र के उत्तर में गुरुदेव ने लिखा है – (1) विकार को दूर करने की लगन बढ़ानी है, (2) हमारे साधन का पैमाना हमारे पास है। गुरुदेव ने कहा है कि जब दुनिया गाली दे तब स्थिर रहो। (3) नाम जाप का स्तर जानने के लिये पाँच बातें जानना ज़रूरी हैं – 1. विषय भोग, 2. ईर्ष्या, 3. द्वेष, 4. क्रोध, 5. दूसरों की हँसी उड़ाना – इन सब से यदि हम दूर रह पाते हैं तो हमारा नाम जप सफल है।

शारीरिक कष्टों में विचलित नहीं होना है। हमें जो भी मिला है – मान, अपमान, सुख, दु:ख इत्यादि में सम रहना है और ऐसा नित्यप्रति के सत्संग से ही सम्भव है।

माँ हमारी आन्तरिक सफ़ाई कर रही है। ये सारी अवस्थाएँ हमारे विकास के लिये आवश्यक हैं। जितने भी सन्त हुए हैं सब इसी मार्ग पर चल कर हुए हैं। इसलिये पुरुषार्थ करना है, लगन बनाये रखनी है।

पण्डित योगेश पुजारी जी

माँ गंगा के पावन तट पर परम पूज्य गुरुदेव महाराज के चरणों में बैठकर सत्संग की महिमा बताते हुए कहा कि हमारे पुण्यों के प्रताप से ही सत्संग प्राप्त होता है। गीता के पन्द्रहवें अध्याय के 8वें श्लोक में कहा गया है –

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वर:।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गंधानिवाशयात्॥

अर्थात् यह जीवात्मा जब शरीर को छोड़ता है तो अपने साथ अपनी इन्द्रियों को भी ले जाता है। मन और पाँचों इन्द्रियाँ जीव की संगिनी हैं।

कहा जाता है कि मित्रता एवं शत्रुता बराबर वालों से ही होती है। वायु एवं मन की चंचलता सर्वविदित है।

भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढ़मते।

इसी से सद्गति होगी। परन्तु जीव इन सभी को महत्त्व नहीं देता। समय निकलता जाता है और अन्त

समय आ जाता है।

इन्द्रियाँ किसी को नहीं छोड़तीं और अपने जाल में फँसाकर तरह तरह के प्रपंचों में पूरा जीवन व्यतीत करा देती हैं। जीव का स्वभाव है कि बिना फल आशा के कोई कार्य नहीं करता है।

इसके पश्चात पण्डित जी ने उसी अध्याय के 9वें श्लोक की व्याख्या करते हुए समझाया कि किस प्रकार यह जीवात्मा कान, आँख, त्वचा, रसना और घ्राण के माध्यम से मन के सहारे से विभिन्न विषयों का सेवन करता है। इनमें मन सबसे प्रमुख है क्योंकि, जैसा कि दूसरे अध्याय के 67वें श्लोक में बताया गया है, मन जिस इन्द्रिय के साथ रहता है वह एक ही इन्द्रिय पुरुष की बुद्धि को हर लेती है।

श्री विष्णु कुमार गोयल जी

गुरु वन्दना करने के पश्चात श्री गोयल जी ने गीता के तीसरे अध्याय के 20 व 21वें श्लोक की व्याख्या करते हुए बताया कि गीता में कर्मयोग, भक्तियोग एवं ज्ञानयोग का मिश्रण है परन्तु हमारे गुरुदेव ने जो साधना का रास्ता दिया है वह कर्मयोग मिश्रित भक्तियोग है और यह दृष्टिकोण में परिवर्तित होकर ही प्राप्य है। पूज्य गुरुदेव ने गीता विमर्श में जनक जी को माध्यम बनाते हुए लोक संग्रह की दृष्टि से यज्ञ करते हुए सब कर्म करने का निर्देश दिया है। गुरुदेव महाराज ने बताया है कि साधना के लिये कहीं जाने की ज़रूरत नहीं है। इसी विधि से राजा जनक राज्य कार्य करते हुए भी विदेह सन्त बन गये थे।

कर्म की निष्ठा की दृष्टि से भी अर्जुन को युद्ध करना चाहिए। समाज में रहते हुए प्रत्येक व्यक्ति को अपना कर्तव्य करना चाहिए, अन्यथा पूरा समाज ही विखण्डित हो जायेगा। समाज की मर्यादा के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है। भगवान् अर्जुन को कहते हैं कि समाज के हित के लिये अपने व्यक्तिगत हित का बलिदान कर देना चाहिए। यही साधना है।

पश्चिमी सभ्यता की भावना इसके प्रतिकूल है। त्याग, प्रेम एवं मधुर व्यवहार ही सेवा का मूल मन्त्र है। पूज्य गुरुदेव महाराज ने हमें प्रेम व सेवा का ही पाठ पढ़ाया है।

हमारी साधना का पथ अवरोह पथ है। यद्यपि आरोह पथ से भी प्रभु प्राप्ति हो सकती है, परन्तु हमारी साधना भक्तियोग के द्वारा प्रेरित है। समर्पण निष्ठा से हम अपना मार्ग सुगम करते हुए आगे बढ़ते हैं। राम नाम प्रभु कृपा का वाहन है। इस नाम से ही शोधन होता है और अवश्य होता है। साधक निर्भय होकर प्रभु नाम के सहारे से आगे बढ़ता चला जाता है।

श्री सुधीर कान्त अग्रवाल जी

गुरुदेव महाराज की वन्दना के साथ उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट की कि उन्होंने हमें शिविर में बुलाने की कृपा की जिससे कि हम उनके चरणों में बैठकर उनके द्वारा बताये गये मार्ग का अनुसरण करते हुए भगवती माँ की कृपा की अनुभूति कर सकें। गुरुदेव ने इतना स्पष्ट, सरल और ग्रहण करने योग्य साधना का मार्ग बताया है जिस पर कोई भी साधक सुगमता से चल सकता है। शिविर में आकर हम सभी साधकों का कर्तव्य है कि अपनी सम्पूर्ण शक्ति और समय का सदुपयोग करते हुए यहाँ उपलब्ध सभी साधनों का लाभ उठायें –

1. **स्वाध्याय** – गुरुदेव के साहित्य का श्रद्धापूर्वक पठन, मनन व चिन्तन, विशेषकर गीता विमर्श, आध्यात्मिक साधन तथा रामायण की चौपाईयाँ आदि।
2. **नाम जप** – नाम जप निरन्तर होता रहे। यदि हम अन्य कार्यों में लगे हैं तो भी नाम जप करते रहें। इससे मन में निर्मलता आती है।
3. **व्यवहार में प्रेम, त्याग और सेवा की भावना**

बनाये रखना भी अपने आप में एक साधना है। इससे जीवन उत्तरोत्तर शान्त एवं प्रभुमय होता जाता है।

4. **अभीप्सा और समर्पण की भावना** से नाम जप करने से साधना में तीव्रता आती है और प्रभु को अपने निकट आता हुआ देखते हैं।

हमें विचार करना चाहिए कि समय बहुत कम है। हम लोग अपने जीवन के अन्तिम पड़ाव पर हैं। कितना समय शेष है इसका हमें अनुमान नहीं है परन्तु इतना विश्वास अवश्य है कि पूज्य गुरुदेव ने हमारी बाँह पकड़ रखी है और वह हमें निरन्तर विकास की ओर लिये जा रहे हैं। हमारा परम कर्तव्य है कि हम इस अमूल्य समय को गंवायें नहीं और लगातार निष्ठा के साथ पूज्य गुरुदेव के चरणों में नाम स्मरण करते हुए उनको कृतज्ञ भाव से श्रद्धा पुष्प अर्पित करें। यही उनकी सबसे बड़ी गुरु दक्षिणा होगी।

बहन सुनीता दुआ जी

गुरुदेव की कृपा से हमारे जीवन में बदलाव आ रहा है। गुरुदेव लगातार हमें आश्वस्त करते हैं कि जितना हम इस जीवन में साधना कर सकें उतना ही अच्छा है। ये निरन्तरता जन्म-जन्मान्तर से चल रही है।

नहिं देखा मैं पापी कपटी
अवगुण पर नहीं किया विचार।
सतगुरु प्यारे परम उदार
दीनबंधु अति करुणा सागर
करें अकारण कृपा अपार॥

यह तो जन्म जन्मान्तर की कृपा है। गुरुदेव ने हम पर कृपा की है। हमें अपने विकारों – काम, क्रोध, मद, लोभ इत्यादि का त्याग करने का प्रयास करना है। भाग्य को दोष न देते हुए अपने सतगुरु पर विश्वास करते हुए आगे बढ़ना है। हमारी साधना का मार्ग बहुत सुगम है। नाम जाप करते हुए अपने मार्ग पर बढ़ना है। जब हमारी चेतना देवत्व की ओर बढ़ती है तभी विकास होता है।

'मन उसी की करो प्रार्थना'

किसी भी परिस्थिति में विचलित न होते हुए हम अध्यात्म के मार्ग पर आगे बढ़ने का प्रयास करें।

श्री केवल कृष्ण नैयर जी

स्वामी जी कहते हैं कि हमें राग द्वेष से दूर रहकर साधना करनी है और आगे बढ़ना है। आन्तरिक सफाई रखनी है, सबसे प्रेमपूर्ण व्यवहार करना है। मीठा बोलते हुए, सेवा करते हुए जीवन सफल करना है।

बहन गीता गुप्ता जी

हमें पूरी निष्ठा से गुरु महाराज की बातों पर विश्वास करना चाहिए जैसे बच्चा जब स्कूल जाता है तो जो अध्यापक कहता है उसी को मानता है।

गुरु महाराज ने कहा है कि साधक को एक ही मार्ग पर चलना चाहिए। जगह जगह गड्ढे खोदने से पानी नहीं निकलता है। एक ही जगह खोदते रहने से ही पानी तक पहुँचा जा सकता है।

गुरु महाराज ने समय का अनुपालन करना अति आवश्यक बताया है। सत्संग या ध्यान में जाओ तो समय से पहले पहुँचना चाहिए।

जीवन साधना के लिये मिला है। साधना नहीं करेंगे तो जीवन पशुवत हो जायेगा।

जिस प्रकार भोजन में शक्कर नहीं डाली जाये तो भोजन रसहीन हो जाता है उसी तरह जीवन में सत्संग, भजन न हो तो जीवन रसहीन हो जाता है।

सोते जागते, हर समय राम नाम जपना है और काम भी करना है। इस प्रकार पूरा जीवन ही साधनामय हो जायेगा।

16.5.23 से 18.8.23 तक के 2100/- से ऊपर दानदाताओं की सूची

साधकगण अपने दान की राशि चैक द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में जमा करवा सकते हैं।

Swami Ramanand Sadhna Pariwar
BANK OF INDIA,
Haridwar
A/c No.: 721010110003147
I.F.S. Code: BKID0007210

Swami Ramanand Sadhna Pariwar
HDFC BANK,
Bhoopatwala, Saptrishi Chungi, Haridwar
A/c No.: 50100537193693
I.F.S. Code: HDFC0005481

साधना धाम का PAN नम्बर AAKAS8917M है।

कृपा करके जमा करवाई हुई राशि का विवरण एवं अपना नाम और पता तथा PAN या आधार कार्ड नम्बर, पत्र, फोन, E-mail अथवा WhatsApp द्वारा साधना धाम कार्यालय में अवश्य सूचित करें। जिससे आपको रसीद आसानी से प्राप्त हो जायेगी।

– **रवि कान्त भण्डारी,** प्रबन्धक, साधना धाम, मोबाइल: 09872574514, 08273494285

1.	योगेन्द्र पाण्डेय, कानपुर	151111	
2.	इज्जत राय-सन्तोष उप्पल, लुधियाना	125000	
3.	श्री राम इण्डस्ट्रीज, पूरनपुर	101000	
4.	मंजू लता-मदनलाल जयसवाल, कानपुर	101000	
5.	नरेश चन्द्र, कानपुर	101000	
6.	सुधीर कान्त अग्रवाल, मेरठ	100000	
7.	हरपाल सिंह राजपूत, हरिद्वार	100000	
8.	गुप्तदान	100000	
9.	गुप्तदान	100000	
10.	पद्मा शुक्ला/शुभ्रा शुक्ला, लखनऊ	60000	
11.	बक्सों से दान (10.06.2023), हरिद्वार	59185	
12.	ऑनलाइन	31000	
13.	के.के. नैय्यर, दिल्ली	31000	
14.	गुरु पूर्णिमा-2023, हरिद्वार	28085	
15.	इज्जत राय-सन्तोष उप्पल, लुधियाना	21000	
16.	प्रतीक मित्तल, नोएडा	21000	
17.	अशोक कुमार शर्मा, लखनऊ	15000	
18.	राकेश कुमार अग्रवाल, दिल्ली	11000	
19.	मीरा, नोएडा	11000	
20.	ऑनलाइन	11000	
21.	ललित मोहन जोशी, हल्द्वानी	11000	
22.	सुधीर कान्त अग्रवाल, मेरठ	11000	
23.	अजय कुमार तिवारी, कानपुर	11000	
24.	विजयेन्द्र पाल भण्डारी, अमृतसर	11000	
25.	विष्णु गौड़	11000	
26.	मधु खुल्लर, गुरुग्राम	11000	
27.	उमा सलूजा, लुधियाना	11000	
28.	सुनील कान्त अग्रवाल, पीलीभीत	11000	
29.	सचिन अग्रवाल, फरीदाबाद	11000	
30.	शालीमार प्रसीजन एंटरप्राइजेज, दिल्ली	11000	
31.	नवीन नंदराजोग, दिल्ली	10000	
32.	रेखा नंदराजोग, दिल्ली	10000	
33.	रामकृपाल कटियार, शाहजहाँपुर	10000	
34.	मुनिया मिश्रा, कानपुर	7000	
35.	चन्द्रभान गुप्ता, दिल्ली	5100	
36.	ऑनलाइन	5100	
37.	सुनील कान्त अग्रवाल, पीलीभीत	5100	
38.	सुमन भण्डारी, गुरूग्राम	5100	
39.	शिवम अग्रवाल, फरीदाबाद	5100	
40.	सुधीर कान्त अग्रवाल, मेरठ	5100	
41.	नीरज कुमार पाण्डेय, कानपुर	5100	
42.	मंजू गुप्ता, देहरादून	5100	
43.	अनिल चन्द्र मित्तल, बीसलपुर	5100	
44.	डॉ. कमल दीप सिंह, शाहजहाँपुर	5100	
45.	कृष्ण अवतार अग्रवाल, बीसलपुर	5100	

(शेष अगले पृष्ठ पर....)

(16.5.23 से 18.8.23 तक के 2100/- से ऊपर दानदाताओं की सूची पिछले पृष्ठ से ...)

46.	कृष्णा देवी, काशीपुर	5100
47.	चन्द्र प्रकाश गुप्ता, बरेली	5100
48.	अभिषेक अग्रवाल, बरेली	5100
49.	सुशील चन्द्र गोयल, आगरा	5100
50.	राजकुमार अग्रवाल, बरेली	5100
51.	राकेश अग्रवाल, नई दिल्ली	5000
52.	सुनीति देवी अग्रवाल, पीलीभीत	5000
53.	ऑनलाइन	5000
54.	राम चन्द्र लाल गुप्ता, पूरनपुर	5000
55.	हरपाल सिंह राजपूत, हरिद्वार	5000
56.	सुनीति देवी अग्रवाल, पीलीभीत	5000
57.	कमलेश गौड़, कानपुर	5000
58.	बृजेन्द्र गौड़, देहरादून	5000
59.	नरेन्द्र दीक्षित	5000
60.	विजय रतन तुली	5000
61.	मुनीश चन्द्र शर्मा, बरेली	5000
62.	पुष्पा-वीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, कानपुर	5000
63.	सुनीति देवी अग्रवाल, पीलीभीत	5000
64.	सुनीति देवी अग्रवाल, पीलीभीत	5000
65.	चन्द्र प्रकाश गुप्ता, बरेली	4100
66.	मुनीश महाजन, जालन्धर	4100
67.	विष्णु अग्रवाल, बरेली	3751
68.	सन्तोष गोयल, दिल्ली	3100
69.	संजय कुमार अग्रवाल, फरीदाबाद	3100
70.	हरिओम अग्रवाल, मुरादाबाद	3100
71.	सन्तोष अग्रवाल, कोटद्वार	3100
72.	अशोक कुमार शर्मा, लखनऊ	3100
73.	विष्णु कुमार अग्रवाल, बरेली	3100
74.	शशिकान्त कुलश्रेष्ठ, गाजियाबाद	3100
75.	अविनाश अरोड़ा-सावित्री लालवाणी	3100
76.	कमल कुमार अग्रवाल, बीसलपुर	3000
77.	शशि अग्रवाल, हरिद्वार	2500
78.	कमल कपूर, बरेली	2500
79.	कामिनी वर्मा, लखनऊ	2500
80.	शशि अग्रवाल, हरिद्वार	2500
81.	अशोक कुमार गुप्ता, दिल्ली	2500
82.	भारत भूषण अब्बी, नोएडा	2500
83.	हितेश भाटिया, दिल्ली	2500
84.	शशि अग्रवाल, हरिद्वार	2500
85.	श्याम मोहन गुप्ता	2100
86.	योगेन्द्र पाण्डेय, कानपुर	2100
87.	श्याम मोहन गुप्ता, मुम्बई	2100
88.	सुनीता भण्डारी, लुधियाना	2100
89.	ऑनलाइन	2100
90.	मधु बाला गर्ग, हरिद्वार	2100
91.	शशिबाला, लखनऊ	2100
92.	कामिनी वर्मा, लखनऊ	2100
93.	चन्द्र प्रकाश गुप्ता, बरेली	2100
94.	जय प्रकाश डंगवाल, देहरादून	2100
95.	योगेश कुमार अग्रवाल, बीसलपुर	2100
96.	राजीव रतन सिंह, हरदोई	2100
97.	गोपाल कृष्ण लड्ढा	2100
98.	सोमवती मिश्रा-मालती पाण्डे, कानपुर	2100
99.	ज्ञानवती शुक्ला, गाजियाबाद	2100
100.	अनिरुद्ध-राखी अग्निहोत्री, रुड़की	2100
101.	नीता सहगल, दिल्ली	2100
102.	सुमन त्रिपाठी, कानपुर	2100
103.	नीता सहगल, दिल्ली	2100
104.	विष्णु अग्रवाल, बरेली	2100
105.	अंजनी गुप्ता	2100
106.	दिनेश चन्द अग्रवाल, बीसलपुर	2100
107.	मिथलेश कुमारी, गाजियाबाद	2100
108.	ऋषभ अग्रवाल, पीलीभीत	2100
109.	अविनाश मिश्रा, बरेली	2100
110.	सन्दीप मरवाह, दिल्ली	2100
111.	अंशुल अग्रवाल, बरेली	2100
112.	जितेन्द्र चौहान, मेरठ	2100
113.	आशुतोष कुमार सिंह, पीलीभीत	2100
114.	डॉ. आकांक्षा अग्रवाल, मेरठ	2100
115.	राकेश कुमार सक्सेना, पीलीभीत	2100
116.	निशा गुप्ता, दिल्ली	2100
117.	नवदीप सूद, होशियारपुर	2100

वार्षिक शिविर-2023 कानपुर

शिविर-स्थलः जे.के. मन्दिर के पीछे सोसाइटी धर्मशाला पाण्डुनगर, गणेश शंकर विद्यार्थी स्कूल के सामने, कानपुर

प्रत्येक वर्ष की भाँति इस वर्ष भी श्री स्वामी रामानन्द साधना परिवार, कानपुर में **'वार्षिक शिविर'** का आयोजन कर रहा है। यह शिविर पूज्य गुरुदेव की असीम कृपा से दिनांक 3 से 6 अक्तूबर 2023 तक होना निश्चित हुआ है।

6 अक्तूबर 2023 को प्रातः 7 बजे शिविर की पूर्ति और दोपहर 11.00 बजे पूज्य गुरुदेव का भण्डारा होगा। आप सभी साधक भाई बहनों से विनम्र निवेदन है कि शिविर में सम्मिलित होकर पूज्य गुरुदेव का असीम आशीर्वाद और कृपा प्राप्त करें।

शिविर में सम्मिलित होने की सूचना 10 दिन पूर्व निम्न पते पर देने की कृपा करें:-

श्रीमती सुशीला जायसवाल, 105/589 श्रीनगर, कानपुर, मोबाइलः 09322185891

बीसलपुर साधना शिविर-2023

शिविर स्थानः श्री अग्रवाल सभा भवन, स्टेशन रोड, बीसलपुर

3 नवम्बर 2023 सायं शिविर प्रारम्भ होगा और 6 नवम्बर 2023 को प्रातः पूर्ति होगी।

साधकों के लिए बर्तन एवं बिस्तर की व्यवस्था है। बीसलपुर पहुँचने के लिए बरेली से बसें हर 15 मिनट बाद चलती रहती हैं। शाहजहाँपुर से बस एवं रेल सेवा दोनों उपलब्ध हैं। बसें प्रत्येक 1 घन्टे के अन्तराल से एवं रेल छोटी लाइन रेलवे स्टेशन से प्रातः 6 बजे से 10 बजे तक और दोपहर 1 बजे से सायं 5.30 बजे तक उपलब्ध हैं। आप सभी साधक भाई बहनों से विनम्र निवेदन है कि शिविर में सम्मिलित होकर पूज्य गुरुदेव का असीम आशीर्वाद और कृपा प्राप्त करें।

शिविर में सम्मिलित होने की सूचना 10 दिन पूर्व निम्न पते पर देने की कृपा करें:-

श्री सुरेन्द्र कुमार, बीसलपुर, जिला पीलीभीत, मोबाइलः 09410818880

श्री स्वामी रामानन्द जी साधना साहित्य

1.	अध्यात्म विकास	इन पुस्तकों में श्री स्वामी जी ने अपनी विकासवादी नवीनतम साधना पद्धति का विस्तार से वर्णन किया है।
2.	आध्यात्मिक साधना (प्रथम खण्ड)	
3.	आध्यात्मिक साधना (द्वितीय खण्ड)	
4.	Evolutionary Outlook on Life	
5.	Evolutionary Spiritualism	
6.	जीवन-रहस्य तथा उत्पादिनी शक्ति	काम शक्ति तथा अध्यात्म विषय पर स्वामी जी द्वारा विशद् व्याख्या
7.	गीता विमर्श	श्रीमद्भगवद्गीता के प्रथम 7 अध्यायों की स्वामी जी द्वारा विशद् व्याख्या
8.	व्यावहारिक साधना	पूज्य स्वामी जी द्वारा लिखित तीन लेखों – (1) साधकों के लिये, (2) दम्पत्ति के लिये, (3) माता-पिता के प्रति का संकलन
9.	कैलाश-दर्शन	पूज्य स्वामी जी ने कुछ साधकों के साथ कैलाश-पर्वत की यात्रा व परिक्रमा की थी। उस यात्रा का एवं उनकी आत्मानुभूति का विशद् वर्णन
10.	गीतोपनिषद	श्रीमद्भगवद्गीता के आठ से अठारह अध्याय तक स्वर्गीय श्री के.सी. नैयर जी द्वारा व्याख्या
11.	हमारी साधना	श्री पुरुषोत्तम भटनागर द्वारा सम्पादित
12.	हमारी उपासना	
13.	साधना और व्यवहार	
14.	अशान्ति में	
15.	मेरे विचार	
16.	As I Understand	
17.	My Pilgrimage to Kailash	
18.	Sex and Spirituality	जीवन-रहस्य (प्रो. डा. लक्ष्मी सक्सेना द्वारा अंग्रेजी में अनुवादित पुस्तकें)
19.	Our Worship	हमारी साधना
20.	Our Spiritual Sadhana Part-I	आध्यात्मिक साधना (प्रथम खण्ड)
21.	Our Spiritual Sadhana Part-II	आध्यात्मिक साधना (द्वितीय खण्ड)
22.	स्वामी रामानन्द-एक आध्यात्मिक यात्रा	स्वस्पष्ट प्रो. डा. लक्ष्मी सक्सेना
23.	पत्र-पीयूष	कु. शीला गौहरी द्वारा साधकों के नाम स्वामी जी के पत्रों का संकलन
24.	स्वामी रामानन्द-चरित सुधा	स्व. डा. कविराज नरेन्द्र कुमार एवम् वैद्य श्री सत्यदेव
25.	स्वामी रामानन्द-वचनामृत	श्री जगदीश प्रसाद द्विवेदी द्वारा गुरुदेव की पुस्तकों से संकलन
26.	मेरी दक्षिण भारत-यात्रा	पूज्य सुमित्रा माँ जी द्वारा दक्षिण भारत यात्रा का रोचक वर्णन
27.	पत्तियाँ और फूल	भजन, पद, कीर्तन, आरती आदि का संकलन
28.	दैनिक आवाहन विधि	स्वामी जी की साधना प्रणाली पर आधारित – श्रीमती महेश प्रकाश
29.	Letters to Seekers	कु. शीला गौहरी एवं श्री विजय भण्डारी द्वारा साधकों के नाम स्वामी जी के अंग्रेजी पत्रों का संकलन
30.	आत्मा की ओर	
31.	जीवन विकास – एक दृष्टि	Evolutionary Outlook on Life का हिन्दी अनुवाद
32.	विकासात्मक अध्यात्म	Evolutionary Spiritualism का हिन्दी अनुवाद
33.	गुरु के प्रति निष्ठा	तेजेन्द्र प्रताप सिंह
34.	माँ की विभूति – भक्ति रस (भाग 1)	अनाम साधिका
35.	माँ की विभूति – भक्ति रस (भाग 2)	
36.	माँ की विभूति – भक्ति रस (भाग 3)	
37.	माँ की विभूति – भक्ति रस (भाग 4)	
38.	माँ की विभूति – भक्ति रस (भाग 5)	
39.	श्रीराम भजन माला	श्री सूर्य प्रसाद शुक्ल 'राम सरन'
40.	माँ का भाव भरा प्रसाद गुरु का दिव्य प्रसाद	मीरा गुप्ता
41.	पत्र-पीयूष सार	पत्र-पीयूष का संग्रहीत संस्करण
42.	गीता पाठ	
43.	गृहस्थ और साधना	
44.	प्रभु दर्शन	
45.	प्रभु प्रसाद मिले तो	
46.	गीता प्रवेशिका	हिन्दी, संस्कृत व अंग्रेजी में गीता का संग्रहीत संस्करण – रमेश चन्द्र गुप्त

गुरु पूर्णिमा शिविर में साधकों को योगाभ्यास कराती हुई श्रीमती रेवा भाम्बरी जी

बच्चों के शिविर के कुछ विहंगम दृश्य